र्नवालिस थियेटर श्यामबाजार

सरती जवान

ाका इन्द्रजाल और नाच

इयोंके अपूर्व कार्य

र! इस बारका सिलसिला !

NDUSTRIAL BANK LTD

यल वैङ्क लिमिटेड

ांक २८, डलहौसी स्कैर ७१, सूतापट्टी

बम्बई। ब्राञ्च कानपुर लखनऊ

लाइड बैंक लिमिटेड

एजेंट ब्राष्टी ट्रष्ट कम्पनी

Trust Company of New York

मलधन १२ करोड़ रुपया

फंड है ७५६००२२५ रुपय

हुई रकम १५१०६५१५)

है जिसका ब्याज २) फी सकड़ा दिया जाता है

उसकी जांच को हुई चीजों पर (Approved

ाता है यहां (महाजनी काम) और एक्सचेंजका

है। कारबार तथा कल कारखानेवालोंके लिये

ी है।

काम भी होता है जिसमें कमसे कम १०) रुपया

और उन रुपयोंका ब्याज ५०००) तक ५)

। बङ्कके सब काम अंगरेजी इस्तलामसे होते हैं।

प्रश्न पर विचार किया गया है। बड़े कामका निबन्ध है। मूल्य ।) ...

एनीवेसेंट—— (पूव बलिन):—श्रीमती बेसेंटका ...

स्वदेशी जीवन। श्री गोस्वामी राधाचरण जीके शब्दोंमें "उपन्यास इस ...

पानी भरता है"। मूल्य ॥।) आ०

कृष्ण अवतार —— (नाटक):—भक्तिरसका यह अपूर्व नाटक ...

द्वारिकानाथ दैना वकील की भक्ति भरी कलमसे निकला है। मूल्य ...

मिलनेका पता:—— साह मदन मोहन

लक्ष्मण साहित्य भंडार चौक, लखनऊ।

द० ४४। (म

विलसन

, मेह,

।—पता ३५१

४४२(१३२२०

नेजरी

आप तीर्थ या...

अवस्था अभी २८ व...

वैंक — बंगाल बैंकके सुप...
१ से कड़े अधिक बढ़ गयी है;
समय ६ से कड़े है।

...समितिकी ओर
लोग अपनी आ...
है। हिन्दूसे
मत प्रकट
इसवार पं०
सम्पति बन
आनन्द...

भारतीयोंको सहायता देनेका
अपने प्रभावसे इस
...से पूर्ण सहानु...

(ह०) मोतीलाल नेहरू,
अध्यक्ष कांग्रेस।

...पक्षके ब्रिटिश ...नीतिका पालन ...'आश्वासन' नहीं किया था। यहां ... एक बारकी बैठकमें मि० ...पारेखने प्रस्ताव किया कि जबतक कांग्रेस डेप्युटेशनके सदस्य यहां हैं तबतक उनमेंसे कुछ लोग कमिटीके सदस्य बनाये जायं पर अनुमोदकके अभावके कारण यह प्रस्ताव यों ही रह गया और दिन डा० रथरफर्डका यह प्रस्ताव कि इस समय यहां जो पांच भारतीय प्रातिनिधिक डेप्युटेशन है वे अपने एक एक प्रतिनिधिको चुनकर कमिटीकी साधारण बैठकमें भेज सकते





श्रीवृत्तिप्रभाकरसारसंग्रह

श्रीस्वामीअनंतानन्दगिरिजीकृत।

तदाज्ञया

श्रीसेठजानकीदासजीमणासाकेने

श्रीभाईप्रतापसिंहजीने

श्रीकाशीजीमें

यहपुस्तक

छपवायकेप्रसिद्धकीआ

दोहा

ब्रह्मरूप अहिब्रह्मवित। ताकीबानीवेद

भाषाअथवा संस्कृत।करतभेदभ्रमछेद

दोहा

प्रगट विष्णुसम संस्कृत।भाषाहरिपाषाण

श्रद्धामान पुमानको।करत उभय कल्याण

यहपुस्तक श्रीकाशीजी कचौरीगलीमें

भाईप्रतापसिंहजीकीदुकानमेंमिलेगा॥

मुहल्लाबागहाडा गौरी शङ्करयन्त्रालयमें-

विश्वेश्वर नेछापा

श्रीसम्वत् १९४७॥

शुद्धभाद्रपदशुक्ल ११॥

शाके१८१२

श्रीगणेशायनमः
श्रीशिवोजयति

अथश्रीवृत्तिप्रभाकरसारसंग्रहप्रारंभः

॥ सवैया ॥

जासु अबोधहिते भव भासत बोध भये विलयं भव जावै चेतन औसत सौख्य वपू नित भेद विहीन। जिसे श्रुति गावै यागन दानन पाठन संनर जासल खै फल मोक्षहि पावै सो शिववेदन वेद्य सदामम चीत्त विषे वर वास लगावै ॥ १ ॥ दोहा ॥ नाम रूप संसार को जो धिष्ठान उचार सत चित आनन्द एक शिव ताहि नमो बहु वार ॥ २ ॥ दोहा ॥ सच्चित्स्रमा नन्द निखिल प्रपंचा धार शिव हर है मतिको मंद रचौं ग्रंथ तिंह वंद पद ॥ ३ ॥ अहं ब्रह्मास्मिया वृत्ति सें कार्य सहित अज्ञान की निवृत्ति और परमा नन्द की प्राप्ति होवै है यह वेदांत का सिद्धांत है ॥ तहां यह जिज्ञासा होवैहै ॥ वृत्ति किसकूं कहे हैं ॥ वृत्तिका प्रयोजन कौन है ॥ वृत्तिका कारण कौन है अज्ञान अंतःकरण का जो परिणाम सो वृत्ति कहिये हैं ॥ क्रोधसुखादि कवी अंतःकरण के परिणाम हैं ॥ आकाशादिक अज्ञान के परिणाम हैं तिन को वृत्ति नहीं कहिये हैं विषय का प्रकाशक जो अंतः करण का औ अज्ञान का परिणाम सो वृत्ति कहिये हैं ॥ वृत्ति ज्ञान दो प्रकार का है एक प्रमा रूप है दू-

सरा अप्रमा रूप है॥ प्रमाण जन्य ज्ञान कूं प्रमाक
हे हैं॥ अप्रमा ज्ञान दो प्रकार का है एक यथार्थ है
दूसरा भ्रम हैं दोष जन्य कूं भ्रम कहे हैं जैसे शु-
क्ति में रजत ज्ञान सादृश्य दोष जन्य है॥ जीवका
ज्ञान अंतः करण की वृत्ति रूप हैं तैसे ईश्वर का
ज्ञान माया की वृत्ति रूप है जीवन के अदृष्ट जन्य
है प्रमाण जन्य नहीं यांते प्रमा नहीं॥ दोष जन्य
नही यांते भ्रम बीनहीं परंतु यथार्थ हैं संवादी ज्ञा
न कूं यथार्थ कहेहैं प्रमाण के षट् भेद हैं प्रत्यक्ष॥
१॥ अनुमान २॥ शब्द॥ ३ उपमान॥ ४ अर्थापत्ति ५
॥ अनुपलब्धि॥ ६॥ प्रत्यक्ष प्रमा का जो करण हो
वै सो प्रत्यक्ष प्रमाण कहिये हैं न्याय शास्त्र में चार
प्रमाण माने हैं अर्था पत्ति अनुपलब्धि कूंनहीं मा
नेहैं॥ जो प्रमाका करण होवै सो प्रमाण कहिये है॥
व्यापार वाला जो असाधारण कारण होवै सो करण
कहिये है ईश्वर औतां के ज्ञान इच्छा कृति दिशा का
ल अदृष्ट प्राग भाव प्रति बंध का भाव नवसाधार का
रण हैं॥ इन सैं भिन्न को असाधारण कारण कहे हैं
सो असा धारण कारण दो प्रकार काहोवै है एक व्या
पार वाला एक व्यापार हित॥ कारण तें उपज के
कार्य कूं उपआवै सो व्यापार कहिये हैं तिस वाला
कारण व्यापार वाला कारण कहिये है जैसे घट का
कपाल व्यापार वाला कारण है सो करण कहियेहै
॥ जो किसी दूरा उपजावै नहीं किंतु आपहीं उ-
पजावै सो व्यापार हीन कारण कहिये है जैसे क

पाल का संयोग है॥ प्रत्यक्ष प्रमा के करण इंद्रिय षट् हैं श्रोत्रादि पांच औमन॥ उपाधिका औ अभाव का जो आपने आश्रय तें संबंधतां कूं स्वरूप संबंध कहे हैं॥ स्वरूप कूंही विशेषणता कहे हैं॥ श्रोत्र समवेत जो ध्वनि तामें तारत्व मंदत्व का विशेषणता संबंध होने तें॥ श्रोत्रका औ तारत्व मंदत्व का श्रोत्र समवेत विशेषणता संबंध है॥ इस रीति सें श्रोत्र इंद्रिय श्रौत्र प्रत्यक्ष प्रमाका करण है॥ श्रोत्र मन का संयोग व्यापार है॥ शब्दादिकन का प्रत्यक्ष प्रमारूप ज्ञान फल है॥ त्वक् इंद्रिय तें स्पर्श का ज्ञान होवे है॥ स्पर्श के आश्रय का ज्ञान होवे है स्पर्श के आश्रित जो स्पर्शत्व जाति तांका औ स्पर्शाभाव का त्वक् इंद्रिय तें प्रत्यक्ष होवे है॥ शंका श्रोत्र मन का संयोग श्रोत्र जन्य तो है परंतु श्रोत्र। जन्य प्रमाका जनक किस रीति सें है॥ समाधान आत्म मन का संयोग तो सर्व ज्ञान का साधारण कारण है॥ यांते ज्ञान की सामान्य सामग्री आत्ममन। का संयोग है प्रत्यक्ष आदिक ज्ञान की विशेष सामग्री इंद्रिय अनुमान आदिक हैं॥ श्रोत्र जन्य प्रत्यक्ष ज्ञान तें पूर्ववी आत्म मन का संयोग होवे है॥ न्याय मत में परम अणु मन है यांते एक काल में अनेक इंद्रियन तें मन का संयोग संभवे नहीं॥ जिस अधिकरण में पदार्थ का अभाव होवे तिस अधिकरण में पदार्थ के अभाव का विशेषणता संबंध कहिये हैं॥ जैसे वायू में रूप नहीं है॥ औ पृथिवी में घ

ट नहीं है ॥ शब्द के दो भेद हैं एक भेरी आदिक दे
श में ध्वनि रूप शब्द है दूसरा कंठादिक देश में वा
यू के संयोग तें वर्ण रूप शब्द होवै है श्रोत्र इंद्रिय
तें दोनो का प्रत्यक्ष होवै है ॥ ध्वनी शब्द के तार
त्वादिक धर्म जाति रूप नहीं न्याय मत में उपाधी रू
प हैं ॥ त्वक् इंद्रिय का गोलक जो शरीर तांकी क्रि
या तें वा घटादिक विषय की क्रिया तें वा दोनूं की
क्रिया तें त्वक् का घटादिक द्रव्य तें संयोग होवै ।
तब त्वाच ज्ञान होवै है ॥ तहां त्वाच प्रत्यक्ष प्रमा ।
फल है ॥ त्वक् इंद्रिय करण है ॥ त्वक् इंद्रिय का घ
ट सें संयोग व्यापार है ॥ काहे तें त्वक् औ घट के सं
योग के उपादान कारण घटत्वक् दोनूं हैं ॥ संयोग
वाले कूं संयुक्त कहे हैं ॥ अभाव का प्रत्यक्ष होवै ॥ त
हां त्वक् संयुक्त घट में समवेत जो स्पर्श तांके वि
षे रूपत्वाभाव का विषेषणता संबंध होने तें त्व
क् संयुक्त समवेत विशेषणता संबंध है ॥ त्वाच ।
प्रत्यक्ष में चार संबंध हेतु हैं ॥ त्वक् संयोग ॥ १ ॥ त्व
क् संयुक्त समवाय ॥ २ ॥ त्वक् संयुक्त समवेत स
मवाय ॥ ३ ॥ त्वक् संबद्ध विशेषणता ॥ ४ ॥ त्वक् ।
सें संबंध वाले कूं त्वक् संबद्ध कहे हैं ॥ तैसे चाक्षु
ष प्रमा के हेतु वी नेत्र संयोग ॥ १ ॥ नेत्र संयुक्त स
मवाय ॥ २ ॥ नेत्र संयुक्त समवेत समवाय ॥ ३ ॥ ने
त्र संबद्ध विशेषणता ॥ ४ ॥ जहां नेत्र सें घटादि
क द्रव्य का चाक्षुष प्रत्यक्ष होवै ॥ तहां नेत्र की क्रि
या सें द्रव्य के साथ संयोग संबंध है ॥ सो संयोग ने

त्र जन्य है॥ नेत्र जन्य जो चाक्षुष प्रमातं का जन क है॥ यांते व्यापार है॥ यद्यपि नेत्र सें संयोग सक ल द्रव्यन का है तथापि उद्भूत रूप वाले द्रव्य तैं नेत्र का संयोग चाक्षुष प्रत्यक्ष का हेतु है॥ जैसे पृथिवी मैं रूप १ रस २ गंध ३ स्पर्श ४ संख्या ५ परिमाण ६ पृथक्त्व ७ संयोग ८ विभाग ९ परत्व १० अपरत्व ११ गुरुत्व १२ द्रव्यत्व १३ संस्कार इन मै गंध कूं छोड के स्नेह कूं मिलावै तो चतुर्दश जल के हैं॥ इन मैं रस गंध गुरुत्व स्नेह कूं छोड के एकादश तेज के हैं॥ इन मैं रूप संख्या परिमाण पृथक्त्व संयोग वि भाग परत्व अपरत्व द्रवत्व इतने गुण चाक्षुष प्र त्यक्ष योग हैं॥ और नहीं स्पर्श मैं नेत्र की योग्य- ता नहीं त्वक् इंद्रिय की योग्यता हैं रूप मैं नेत्र की योग्यता है त्वक् की नहीं॥ तैसे रसन इंद्रिय- सें तो द्रव्य का प्रत्यक्ष होवै नहीं किंतु रस का औ रसत्व मधुरत्वादिक रस की जाति का तथा रसा भा व का मधुरादिक रस मैं अमलत्वादिक जाति के अ भाव का रासन प्रत्यक्ष होवै है॥ यांते रासन प्रत्यक्ष के हेतु रसन इंद्रिय तैं विषयन के तीन संबंध हैं ॥ रसन संयुक्त समवाय॥१॥ रसन संयुक्त सम वे त समवाय॥२॥ रसन संबद्ध विशेषणता॥३॥ रस मैं रसत्व जाति का औ मधुरत्व अम्लत्व लवणत्व कटुत्व कषायत्व तिक्तत्व रूप षट् धर्मन का रस न इंद्रिय तैं रासन साक्षात् कार होवै है तहां रसन सें फलादिक द्रव्य का संयोग है॥ तहां द्रव्य मैं रस

समवेत होवै है॥ रसन इंद्रिय का अम्लत्वाभाव मैं संयुक्त समवेत विशेषणता संबंध है॥ तैसे घ्राणज प्रत्यक्ष प्रमा होवै॥ तहां बी घ्राण के विषयनतें तीन संबंध हेतु हैं॥ घ्राण इंद्रिय तैं द्रव्य का तो प्रत्यक्ष होवै नहीं॥ किंतु गंध गुण का प्रत्यक्ष होवै है॥ जहां पुष्पादिक दूर होवैं औ गंध का प्रत्यक्ष होवै॥ तहां यद्यपि॥ पुष्प मैं क्रिया दीषै नहीं॥ यांते पुष्पादिकन का घ्राण तें संयोग कै आभाव ते घ्राण संयुक्त समवाय संबंध संभवै नहीं तथापि॥ गंध तो गुण है॥ यांते केवल गंध मैं क्रिया होवै नहीं किंतु गंध के आश्रय जो पुष्पादिकन के सूक्ष्म अवयवतिन मैं क्रिया होय के घ्राण तें संयोग होवै है॥ यांते घ्राण संयुक्त जो पुष्पादिकनके अवयव तिन मैं गंध का समवाय होने तें॥ घ्राण संयुक्त सम वाय संबंधही गंध कै घ्राण ज प्रत्यक्ष का हेतु हैं॥ इसरीति सें घ्राण जप्रत्यक्ष के हेतु तीन संबंध हैं॥ सोव्यापार है॥ घ्राण इंद्रिय करण है॥ घ्राणज प्रत्यक्ष प्रमा फल है॥ इस रीति सें श्रोत्रादिक पंच इंद्रियनतें वाह्य पदार्थन का ज्ञान होवै है॥ आत्मा औ आत्मा के सुखादिक धर्म औ आत्मत्व जाति तथा सुखत्वादिक जाति इनका प्रत्यक्ष श्रोत्रादिकनतें होवै नहीं॥ किंतु आत्मादिक जो अंतर पदार्थ तिनके प्रत्यक्ष का हेतु मन इंद्रिय है॥ आत्मा औ तांके सुखादिक धर्म नतें भिन्न कूं वाह्य कहे हैं॥ अपने संबधी का संबंध परंपरा संबंध कहिये हैं॥ मनकै

साथ ज्ञानादिकन का साक्षात्संबंधतो है नहीं किंतु परंपरा संबंध है॥ ज्ञानादिकन का मन तैं स्वसमवायी संयोग संबंध है॥ ज्ञानत्वादिकन का स्वाश्रय समवायी संयोग संबंध है॥ स्व कहिये ज्ञानत्वादिकतिन के आश्रय जो ज्ञानादिक तिन का समवायी आत्मा ता का मन सैं संयोग है॥ तैसे मन का ज्ञानादिकन मैं परंपरा संबंध है॥ सो मनःसंयुक्तसमवाय है॥ मन सें संयुक्त कहिये संयोगवाला जो आत्मा तासैं ज्ञानादिकन का समवाय संबंध है॥ तैसे ज्ञानत्व इच्छात्व प्रयतनत्व सुखत्व दुःखत्व द्वेषत्व का मन सें प्रत्यक्ष होवे है॥ मनःसंयुक्त समवेत समवाय संबंध है॥ तैसे आत्मा मैं सुखाभाव का औ दुखाभाव का प्रत्यक्ष होवे तहां मनःसंबद्ध विशेषणता संबंध है काहे तैं मन सें संबद्ध कहिये संयोग संबंध वाला जो आत्मा तामैं सुखाभाव का औ दुखाभाव का विशेषणता संबंध है॥ सुख मैं दुःखाभाव का प्रत्यक्ष होवे है तहां मनःसंयुक्त समवाय विशेषणता संबंध है॥ सुखदुःख गुणान का आत्मा मैं समवाय संबंध है॥ मानस प्रत्यक्ष के हेतु चार संबंध व्यापार हैं॥ संबंध रूप व्यापार वाला असाधारण कारण मन करण है॥ यांते प्रमाण है॥ आत्मासुखादिकन का मानस साक्षात्कार रूप प्रमा फल है॥ परंतु धर्मादिक गुण प्रत्यक्ष योग नहीं॥ यांते धर्मादिकन का मानस प्रत्यक्ष होवै नहीं॥ जैसे दो अंगुली संयोग के आश्रय हैं॥ अंगुली दो का चाक्षु

ष प्रत्यक्ष होवै तब संयोग का चाक्षुष प्रत्यक्ष होवै है॥ अंगुली काचाक्षुष प्रत्यक्ष होवै तब अंगुली के संयोग काचाक्षुष प्रत्यक्ष होवै है॥ तैसें आत्ममन के संयोग तैं आत्माका मानस प्रत्यक्ष होवै॥ तहां संयोग का आश्रय आत्मा है॥ यांते संयोग का वी मानस प्रत्यक्ष हुवा चाहिये॥ घटकी क्रिया तैं घट आकाश का संयोग होवै है तिन मैं घट तो प्रत्यक्ष है आकाश प्रत्यक्ष नहीं॥ यांते संयोग का प्रत्यक्ष नहीं॥ तैसें आत्मा का तो प्रत्यक्ष है॥ मन का प्रत्यक्ष नहीं॥ संयोग का वी प्रत्यक्ष नहीं॥ इंद्रिय जन्य प्रत्यक्ष प्रमा के हेतु इंद्रिय संबंध है सो व्यापार है॥ इंद्रियप्रत्यक्ष प्रमाण है॥ इंद्रिय जन्य साक्षात्कार प्रत्यक्ष प्रमा फल है॥ यह न्याय शास्त्र का सिद्धांत है॥ गौरी कांत भट्टाचार्य ने यह लिखा है जो न्याय मैं व्यापार रूप कारण माने हैं सो इस पक्ष मैं करण है॥ और जो करण माने हैं सो केवल कारण हैं॥ जहां दोष रहित इंद्रियतें यथार्थ ज्ञान होवै॥ तहां विशेषण का ज्ञान हेतु है॥ यांते रज्जु ज्ञान तें पूर्व रज्जुत्व का ज्ञान होवै है॥ काहे तें श्वेत उष्णीष श्वेत कंचुक वान् यष्टि धर ब्राह्मण सें नेत्रका संयोग होवै॥ तहां कदाचित् मनुष्य है ऐसा ज्ञान होवै है॥ ब्राह्मण है ऐसा ज्ञान होवै है॥ जहां मनुष्यत्व रूप विशेषणका ज्ञान औ नेत्र का संयोग होवै॥ तहां मनुष्य है ऐसा चाक्षुष ज्ञान होवै है॥ घटत्व पृथिवीत्व विशेषण है घट विशेष्य है काहे तें संबंध का प्रति योगी॥

विशेषण कहिये है संबंधका अनुयोगी विशेष्य कहिये है जाका संबंध होवै सो संबंधका प्रति योगी ॥ जामैं संबंध होवै सो अनुयोगी कहिये है॥ विशिष्ट ज्ञान का हेतु विशेषण ज्ञान है॥ विशेषण का ज्ञान॥ कहूं स्मृति रूप है कहूं निर्विकल्प है॥ घट है यह प्रथम जो विशिष्ट ज्ञान तासैं पूर्व घटत्व रूप विशेषण का इंद्रिय संबंध तैं निर्विकल्प ज्ञान होवै है उत्तर क्षण मैं घट है यह घटत्व विशिष्ट घट ज्ञान होवै है॥ सविकल्पक ज्ञान के धर्म धर्मी समवाय तीन विषय हैं यांतै घट है यह विशिष्ट ज्ञान संबंध कूं विषय करनेतैं सविकल्पक कहिये॥ है॥ एक वेरी घट है ऐसा विशिष्ट ज्ञान होय कै फेर घट का विशिष्ट ज्ञान होवै तहां घट सैं इंद्रिय का संबंध होते ही पूर्व अनुभव करे घटत्व की स्मृति होवै है तिसतै उत्तर क्षण मैं घट है यह विशिष्ट ज्ञान होवै है॥ इस रीति सैं द्वितीयादिक विशिष्ट ज्ञान का हेतु विशेषण ज्ञान स्मृति रूप है॥ न्याय मत मैं विशेषण के अभाव वाले मैं विशेषण की प्रतीति भ्रम कहिये है ताहीं कूं अयथार्थ ज्ञान कहे हैं॥ अन्यथा ख्याति कहे हैं॥ न्यायमत मैं सारे ज्ञानों का आश्रय आत्मा है॥ वेदांत मत मैं॥ ज्ञान का उपादान कारण अंतःकरण है यांतै अंतःकरण आश्रय है॥ न्याय मत मैं सुखादिक आत्मा के गुण कहे हैं सो सारे अंतःकरण के परिणाम हैं यांतै अंतःकरण के धर्म हैं॥ भ्रम ज्ञान का सं

रूपतें यह प्रकार है॥ सर्प संस्कार सहित पुरुष के दोषसहित नेत्र का रज्जु सें संबंध होवै तब रज्जु का विशेष धर्म रज्जुत्व भासै नहीं औ रज्जु मैं जो मुंज रूप अवयव हैं सो भी भासै नहीं किंतु रज्जु मैं सामान्य धर्म इदंता भासै है तैसे शुक्ति मैं शुक्तित्व औ नील पृष्ठता त्रिकोणता भासै नहीं किंतु सामान्य धर्म इदंता भासै है यांतै नेत्र द्वारा अंतःकरण रज्जु कूं प्राप्त होय के इदमाकार परिणाम कूं प्राप्त होवै है तां इदमाकार वृत्ति उपहित चेतन निष्ठ अविद्या के सर्पाकार औ ज्ञानाकार दो परिणाम होवै हैं॥ भ्रम ज्ञान इंद्रिय जन्य नहीं॥ किंतु अविद्या की वृत्ति रूप है परंतु जां वृत्ति उपहित चेतन मैं स्थित अविद्या का परिणाम भ्रम है सो इदमाकार वृत्ति नेत्र से रज्जु आदिक विषय के संबंध तै होवै है यांतै भ्रम ज्ञान मैं इंद्रिय जन्यता प्रतीति होवै है॥ सिद्धांत मैं अभाव का ज्ञान वी इंद्रिय जन्य नहीं किंतु अनुपलब्धि नाम पृथक प्रमाण तैं अभाव का ज्ञान होवै है॥ यांतै अभाव के प्रत्यक्ष का हेतु विशेषणता संबंध का अंगीकार निष्फल है॥ ब्रह्माकार वृत्ति मैं जो चिदाभास तांका व्याप्य कहिये विषय ब्रह्म नहीं है वृत्ति मात्र का विषय ब्रह्म है॥ इंद्रियतैं जाति का अथवा गुण का प्रत्यक्ष होवै तहां वेदांत मत मैं संयुक्त तादात्म संबंध है॥ गुण की जाति के प्रत्यक्ष मैं संयुक्त तादात्म्यवत् तादात्म्य संबंध है याहीं कूं संयुक्ताभिन्न ताद

त्म्य कहे हैं ॥ इंद्रिय तैं संयुक्त जो घटादिक तिन्ह
मैं तादात्म्यवत् कहिये तादात्म्य संबंध वाले रू
पादिक हैं तिन्ह मैं तादात्म्य रूपत्वादिक जाति।
काहे अभिन्नका ही। तादात्म्य होवै है जहां श्रोत्र
सें शब्दका साक्षात्कार होवै तहां श्रोत्र मैं क्रिया
होय के शब्द वाले द्रव्य मैं श्रोत्र का संयोग होवै।
है। तां श्रोत्र संयुक्त द्रव्य मैं शब्द का तादात्म्य सं
बंध है काहे तैं वेदांत मैं पंच भूतन का गुण शब्द
होने तैं भेर्यादिकन मैं वी शब्द है यांते संयुक्त ता
दात्म्य संबंध सैं शब्द का प्रत्यक्ष होवै है ॥ इति श्री
मत्परमहंस परिव्राज काचार्य्य यति वर्य्य श्री स्वा
मी राम गिरि शिष्येण काशीवासिना अनंतानन्द।
गिरिणा विरचिते वृत्ति प्रभाकर सार संग्रहे प्रत्यक्ष
प्रमाण निरूपणं नाम प्रथमः प्रकाशः॥१॥ संपू
र्णम् शुभम् भूयात्॥ श्रीशंकरः प्रसन्नोऽस्तु॥ शिव

श्रीगणेशायनमः॥
श्रीकाशीविश्वनाथायनमः॥
श्रीशिवोजयति॥

अथ अनुमान प्रमाण निरूपणं नाम द्वितीयः प्रकाशप्रारम्भः

अनुमिति प्रमा का जो करण होवै सो अनुमान प्र
माण कहिये है॥ लिंग ज्ञान जन्य जो ज्ञान सो अनु
मिति कहिये है जैसे पर्वत मैं धूमका प्रत्यक्ष ज्ञा

न होय के वन्हि का ज्ञान होवे है॥ तहां धूम का प्रत्यक्ष ज्ञान लिंग ज्ञान कहिये है तासें वन्हि का ज्ञान उपजै है यांते पर्वत मैं वन्हि का ज्ञान अनुमिति है जांके ज्ञानतें साध्य का ज्ञान होवे सो लिंग कहिये है अनुमिति ज्ञान का विषय साध्य कहिये है अनुमिती का विषयवन्हि है यांते वन्हि साध्य है॥ धूम ज्ञानतें वन्हि रूप साध्य का ज्ञान होवे है॥ यांते धूम लिंग है॥ व्याप्य के ज्ञान तें व्यापक का ज्ञान होवै है॥ यांते व्याप्य कूं लिंग कहे हैं व्यापक कूं साध्य कहे हैं व्याप्ति वाले कूं व्याप्य कहे हैं॥ व्याप्ति निरूपक कूं व्यापक कहे हैं अविना भाव रूप संबंध कूं व्याप्ति कहे हैं जैसे धूम विषय वन्हि का अविना भाव रूप संबंध है सोई धूम विषय वन्हि की व्याप्ति है यांते धूम वन्हि का व्याप्य है॥ अधिक देश मैं जोर है सो व्यभिचारी कहिये है॥ धूम सें अधिक देश मैं वन्हि रहे है॥ रस तें अधिक देश मैं रूप रहे है॥ दो पदार्थ समान देश मैं रहेने वाले होवें तिन कीवी परस्पर व्याप्ति है जैसे गंध गुण पृथिवीत्व जाति केवल पृथिवी मैं रहे है सम देश वृत्ति होने तें दोनू व्याप्ति वाले होने तें व्याप्य हैं॥ यद्यपि पृथिवीत्व सें न्यून देश वृत्ति गंध है काहे तैं प्रथम क्षण मैं निर्गुण द्रव्य उपजै है द्वितीय क्षण मैं गुण उपजै है॥ जाति प्रथम क्षण मैं वी द्रव्य विषय रहे है॥ तथापि॥ गंधवत्व औ पृथिवीत्व परस्पर व्याप्ति वाले हैं काहे तैं गंध की अधिकरणता कूं गंधवत्व कहे हैं जिस मैं जो पदार्थ कदाचित

होवै तिसमैं तौ पदार्थ की अधिकरणता सदा रहै। है॥ अव्यापवृत्ति पदार्थ की अधिकरणता व्याप्यवृत्ति है देश कृत अव्याप्यवृत्ति औकाल कृत अव्याप्यवृत्ति होवै है॥ जैसे पदार्थ के एक देश मैं संयोग। होवै संयोग की अधिकरणता सारे है॥ पूर्व कहीरीती सें गंधादिक गुण कालिक अव्याप्य वृत्ति हैं॥ व्याप्ति वाले कूं व्याप्यक कहे हैं व्याप्ति कूं व्याप्यत कहे हैं व्याप्ति का ज्ञानवी संदेह रूप कारण नहीं॥ सहचार नाम साथ रहने का है व्यभिचार नाम जुदा रहने का है॥ सकल नैयायिक मत मैं अनुमिति का यह क्रम है॥ प्रथम तो महानसादिकन मैं हेतु साध्य का सहचार दर्शन होवै है तिस तैं हेतु मैं साध्य की व्याप्ति का निश्चय होवै है॥ तिस तैं अनंतर पर्वतादिकन मैं हेतु का प्रत्यक्ष होवै है तिस तैं अनंतर संस्कार का उद्भव होय के व्याप्ति की स्मृति होवै है तिस तैं अनंतर साध्य की व्याप्ति विशिष्ट हेतु का पक्ष मैं प्रत्यक्ष होवै है॥ ताकूं परामर्श कहे हैं॥ वह्नि व्याप्यधूमवान् पर्वतः यह प्रसिद्ध अनुमान मैं परामर्श का आकार है॥ साध्य व्याप्य हेतु मान पक्षः यह परामर्श का सामान्य रूप है॥ तिस तैं अनंतर वह्निमान् पर्वतः ऐसा अनुमिति ज्ञान होवै है॥ परामर्श। अनुमिति का करण होने तैं अनुमान है॥ कोई नैयायिक ज्ञात हेतु कूं अनुमान कहे हैं कोई पक्ष मैं। हेतु के ज्ञान कूं अनुमान कहे हैं व्याप्ति की स्मृति परामर्श कूं व्यापार कहे हैं॥ कोई व्याप्ति के स्मृति ज्ञा

न कूं अनुमान कहे हैं परामर्श कूं व्यापार कहे हैं॥ कोई परामर्श कूं करण कहे हैं॥ कोई व्यापार कहे हैं॥ परामर्श बिना अनुमिति होवै नहीं यह नैयायिकनकामत है॥ मीमांसा का यह मत है जहां पर्वत में धूम के प्रत्यक्ष तैं व्याप्ति की स्मृति होयके वन्हि की अनुमिति होय जावै तहां परामर्श तैं बिना बी अनुमिति अनुभव सिद्ध है॥ परामर्श अन्यथा सिद्ध है॥ कोई व्याप्ति की स्मृति कूं कोई माहानसादिकन में व्याप्ति के अनुभव कूं कोई पक्ष में हेतु के ज्ञान कूं अनुमान कहे हैं॥ अद्वैत ग्रंथवी जहां विरोध न होवै तहां मीमांसा की प्रक्रिया के अनुसार हैं॥ यांते अद्वैत ग्रंथन में वी परामर्श कारण नहीं॥ किंतु माहानसादिकन में जो व्याप्ति का प्रत्यक्षरूप अनुभव होवै है सो अनुमिति का करण है औ व्याप्ति के अनुभव के उद्बुद्ध संस्कार व्यापार हैं पर्वत में जो धूम का प्रत्यक्ष सो संस्कार का उद्बोधक कहे औ जहां व्याप्ति की स्मृति होय जावै तहां वी स्मृति की उत्पत्ति सें संस्कार का नाश तो होवै नहीं यांते स्मृति संस्कार दोनू हैं तहां वी अनुमिति के व्यापार रूप कारण संस्कार हैं॥ व्याप्ति का अनुभव करण है संस्कार व्यापार है अनुमिति फल है यह वेदांत परिभाषादिक अद्वैत ग्रंथन की रीति है॥ वाक्य प्रयोग बिना व्याप्ति ज्ञानादिकन तैं जो अनुमिति होवै सो स्वार्थानुमिति कहे हैं तांके करण व्याप्ति ज्ञानादिक स्वार्थ अनुमान कहे हैं वेदां

त मैं॥ जहां दो का विवाद होवै एक पुरुष कहै प-र्वत मैं वन्हि अनुमान प्रमाण सें निर्णीत है एक कहै नहीं है तहां वन्हि निश्चय वाला पुरुष अप-नैं प्रतिवादी की निवृत्ति वासतै वाक्य प्रयोग करै है तांकूं परार्थानुमान कहै हैं सोवाक्य वेदांत म-त मैं तीन अवयव का होवै है॥ प्रतिज्ञा १ हेतु २ उदाहरण ३ यह वाक्य के अवयवन के नाम हैं॥ पर्वतो वन्हिमान् १ धूमात् २ योयोधूम वान् सोग्नि मान् यथा महानसः ३ इतना महा वाक्य है तामैं तीन अवांतर वाक्य हैं साध्य विशिष्ट पक्ष का बोध-क वाक्य प्रतिज्ञा वाक्य कहीये है ऐसा पर्वतो वन्हि मान् यह वाक्य है तहां वन्हिविशिष्ट पर्वत है ऐ-सा बोधया वाक्यतैं होवै है॥ लिंग का बोधकवच-न सो हेतु वाक्य कहियै है ऐसा वाक्य धूमात् यह है यद्यपि धूमात् धूमेन इनुदोनू का एकहीं अर्थ है त-थापि धूमेन ऐसावाक्य संप्रदायसिद्ध नहीं यह अव-यव ग्रंथ मैं भट्टाचारय ने लिष्या है॥ हेतु साध्य का सह चार बोधक जो दृष्टांत प्रति पादकवचन सो उदाहरण वाक्य कहियै है॥ वादी प्रतिवादी का ज-हां विवाद न होवै किंतु दोनूं का निर्णीत अर्थ जहां होवै सो दृष्टांत कहीयै है ऐसा महानस यह वाक्य है जो महावाक्य सुन कै वी आग्रह करै महानसा-दिकन विषै तो वन्हि का सहचारी धूम है औ पर्वत मैं वन्हि का व्यभिचारी धूम है यांतै पर्वत मैं धूम है वन्हि नहीं है ऐसा प्रतिवादी आग्रह करै॥ अथवा

व्यभिचार की शंका होवै तौ तर्क सें आग्रह औ शंका की निवृत्ति होवै है अनिष्ट आपादन कूं तर्क कहे हैं पर्वत विषे वन्हि बिना धूम होवै तौ वन्हि का धूम कार्य नहीं होवैगा यह अनिष्ट का आपादन रूप तर्क है॥ वेदांत वाक्यन में जीव में ब्रह्म का अभेद निर्णीत है सो अनुमान तें बी इस रीति सें सिद्ध होवै है जीवो ब्रह्माभिन्नः चेतनत्वात् यत्र यत्र चेतनत्वं तत्र ब्रह्माभेदः यथा ब्रह्मणि यह परार्थानुमान कहे हैं ईहां जीव पक्ष है ब्रह्माभेद साध्य है चेतनत्व हेतु है ब्रह्म दृष्टांत हैं ईहां प्रतिवादी जो ऐसे कहै जीव में चेतनत्व हेतु तौ है औ ब्रह्माभेद रूप साध्य नहीं हैं तौ तर्क सें शंका निवृत्ति करैं जीव में चेतनत्व हेतु मान के ब्रह्माभेद रूप साध्य नहीं मानैं तौ। चेतनकूं अद्वितीयता प्रतिपादक श्रुति का विरोध होवैगा अनिष्ट का आपादन तर्क कहिये श्रुति का विरोध सर्व आस्तिकन कों अनिष्ट है॥ व्यावहारिक प्रपंचो मिथ्या ज्ञान निवर्त्यत्वात् यत्र यत्र ज्ञाननिवर्त्यत्वं तत्र मिथ्यात्वं यथा शुक्ति रजतादी॥ व्यावहारिक प्रपंचो मिथ्या यह प्रतिज्ञा वाक्य है ज्ञाननिवर्त्यत्वात् यह हेतु वाक्य है॥ यत्र यत्र ज्ञाननिवर्त्यत्वं तत्र मिथ्यात्वं यथा शुक्ति। रजतादौ यह उदाहरण वाक्य है॥ ईहां प्रपंच कूं ज्ञाननिवर्त्यता मान कै मिथ्यात्व नहीं मानैं तौ सत की ज्ञान तैं निवृत्ति बनै नहीं यातें ज्ञान सें सकल प्रपंच की निवृत्ति प्रतिपादक श्रुति स्मृति का विरोध

होवैगा॥ यातर्कतैं व्यभिचारशंका निवृत्ति होवै है॥ इसरीतिसें वेदान्त अर्थ कै अनुसारि अनेक अनुमान हैं॥ परंतु वेदान्त वाक्यनतैं अद्वितिय ब्रह्म का जो निश्चय सिद्ध हुआ है तिसकी संभावना मात्र का हेतु अनुमान प्रमाण है॥ स्वतंत्र अनुमान ब्रह्म निश्चय का हेतु नहीं काहेतैं वेदान्त वाक्य विना अन्य प्रमाण की ब्रह्म विषै प्रवृत्ति नहीं यह सिद्धान्त है यह संक्षेपतैं अनुमान प्रमाण कह्या॥ इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्ययति वर्य्य श्रीस्वामी राम गिरि शिष्येण काशीवासिना अनन्तानन्द गिरिणा विरचिते वृत्ति प्रभाकर सार संग्रहे अनुमान प्रमाण निरूपणं नाम द्वितीय प्रकाशः समाप्तः॥ २॥ श्रीसांब प्रसन्नोऽस्तु॥ ॥ ॥ ॥ ॥

श्रीगणेशाय नमः॥
श्रीशिवो जयति॥

अथ शब्द प्रमाण निरूपणं नाम तृतीय प्रकाशः प्रारम्भः

शाब्दी प्रमा के करण कूं शब्द प्रमाण कहे हैं॥ शाब्दी प्रमा दो प्रकार की है॥ एक व्यावहारिक है दूसरी पारमार्थिक है॥ व्यावहारिक शाब्दी प्रमा दो प्रकार की है एक लौकिक वाक्य जन्य है दूसरी वैदिक वाक्य जन्य है नीलो घट इत्यादिक लौकिक वाक्य हैं वज्र हस्तः पुरंदरः इत्यादिक वैदिक वा

क्य हैं पदन के समुदाय कूंवाक्य कहे हैं अर्थ वाला। जो वर्ण अथवा वर्ण का समुदाय सो पद कहिये हैं॥ अकारादिक वर्ण बी विष्णु आदिक अर्थ वाले। हैं॥ नारायण आदिक पदन में वर्ण का समुदाय अर्थ वाला है व्याकरण की रीती सें नीलो घटः इस वाक्य में दो पद हैं न्याय की रीती सें चार पद हैं॥ तहां शाब्दी प्रमा का यह प्रकार है नीलो घटः या वाक्य कूं सुनें तब श्रोता कूं सकल पदन का श्रावण साक्षात् कार होवे है पदन के साक्षात्कार सें पदार्थन की स्मृति होवे है॥ शंका पदन का अनुभव पदन की स्मृति का हेतु है पदार्थन का अनुभव पदार्थन की स्मृति का हेतु है॥ अन्य के अनुभव सें अन्य की स्मृति होवै नहीं॥ समाधान यद्यपि संस्कार द्वारा पदार्थन का अनुभवही पदार्थन की स्मृति का हेतु है तथापि उद्भूत संस्कारन सें स्मृति होवे है॥ अनुद्भूत। संस्कारन सें स्मृति हो वै नहीं जो अनुद्भूत संस्कारन सें बी स्मृति होवै तौ अनुद्भूत पदार्थ की सदा स्मृति हुई चाहिये तहां पदार्थन के संस्कारन के उद्भव का हेतु पदन का ज्ञान है का हेतैं संबंधी के ज्ञान तैं तथा सादृश पदार्थन के ज्ञान तैं अथवा चिंतन तैं संस्कार उद्भूत होवै हैं तिन तें स्मृति होवे है यातें वृत्ति सहित पदे का ज्ञान पदार्थ की स्मृति का हेतु हैं सो वृत्ति दो प्रकार की है एकशक्ति रूप औ लक्षणा रूप वृत्ति हैं न्याय मत में ईश्वर की इच्छा रूप शक्ति। हैं मीमांसा के मत में शक्ति नाम कोई भिन्न पदार्थ

हैं व्याकरण के मत मैं औ पातंजल के मत मैं वाच्य वाचक भाव का मूल जो पद अर्थ का तादात्म संबंध सोई शक्ति है॥ शक्ति सहित पद ज्ञान तैं पदार्थ की स्मृति होवै जितने पदार्थन की स्मृति होवे उतने पदार्थों के संबंध का ज्ञान अथवा संबंध सहित सकल पदार्थन का ज्ञान वाक्यार्थ ज्ञान कहिये हैं तांहीं कूं शाब्दी प्रमा कहिये है जैसे नीलो घटः यह वाक्य है नील पद १ ओकार पद २ घट पद ३ विसर्ग पद है ४ नील रूप विशिष्ट मैं नील पद की शक्ति हैं ओकार पद निरर्थक है अथवा अभेद अर्थ हैं घट पद की घटत्व विशिष्ट मैं शक्ति हैं विसर्ग की एकत्व संख्या मैं शक्ति हैं औ न्याय सूत्र मैं गोतम नें जाति आकृति व्यक्ति मैं सकल पदन की शक्ति कही है अवयव के संयोग कूं आकृति कहे हैं औ दीधितिकार शिरोमणि भट्टाचार्य के मत मैं सकल पदन की व्यक्ति मात्र मैं शक्ति है॥ शंका घट पद के उच्चारण तैं घटत्व की गो पद सें गोत्व की प्रतीति होवै है सो या मत मैं नहीं हुई चाहिये॥ समाधान वाच्य की औ र वाच्य वृत्ति जो जाति तां की प्रतीति होवै है जाति भिन्न अवाच्य की प्रतीति होवै नहीं॥ घटादिक पदन की जाति मात्र मैं शक्ति है व्यक्ति मैं नहीं यह मीमांसा का मत है॥ सर्व मत मैं जाति विशिष्ट व्यक्ति मैं घटादिक पदन की शक्ति है॥ औ वज्र हस्त के अभेद वाला एक पुरंदर है॥ वैदिक वाक्य दो प्रकार के है एक व्यावहारिक अर्थ के दू-

सरे परमार्थ तत्व के बोधक हैं परमार्थ तत्व ब्रह्म हैं ब्रह्म बोधक दो प्रकार के हैं तत्पदार्थ वाल्वं पदार्थ के स्वरूप के बोधक अवांतर वाक्य हैं सत्यं ज्ञान। मनंतं ब्रह्म॥ यएषहृद्यंतर्ज्योतिः पुरुषः॥ तत्वम सी आदिक महा वाक्य हैं॥ जैसे गामानयत्वं या वाक्य में गो आदिक पद हैं तिन की अपनें अर्थ मैं वृत्ति का प्रथम ऐसा ज्ञान पुरुष को चाहिये गोप दकी गोत्व विशिष्ट पशु विशेष मैं शक्ति है द्वितीया विभक्ति की कर्मता मैं शक्ति है आनयन मैं आपू र्वनी पदकी शक्ति है यकारोत्तर अकार की कृति औप्रेरणा मैं शक्ति है॥ संबोधन योग्य चेतन मैंत्वं पद की शक्ति है॥ औगो पदार्थ का द्वितीयार्थ कर्म तामैंअधेयतासंबंध है अधेयता कूं वृत्तित्व कहे हैं॥ आपूर्वनी के अर्थ आनयन मैं कर्मताका निरूप कता संबंध है यकारोत्तरअकारका कृति औप्रेरणा दो अर्थ हैं कृति मैं आनयनका अनुकूलता संबंध है कृति का त्वं पदार्थ मैं आश्रयता संबंध है॥प्रेर णाका त्वंपदार्थ मैं विषयतासंबंधहै यांते गोवृ त्ति कर्मता निरूपक आनयन अनुकूल कृत्या श्र यः प्रेरणा विषयः त्वंपदार्थः यह ज्ञान वाक्य श्रोता कूं होवै है॥ जहां पद के शक्य का साक्षात् संबंधहो वै सो केवल लक्षणा जैसे गंगा पद की तीर मैं केव ल लक्षणा॥ लक्षित लक्षणा का उदाहरण द्विरेफो रोति यह वाक्य का दो रकार ध्वनि करै हैं सो वर्ण रूप मै ध्वनि करना संभवै नहीं॥ किंतु दो रेफ वा-

ण जो भ्रमर तिसके शक्य मैं द्विरेफ पद की लक्षणा है॥ सो केवल लक्षणा तो है नहीं काहे तैं जो अर्थ मैं पद के शक्य का साक्षात्संबंध होवै तामैं केवल लक्षणा होवै है द्विरेफ पद का शक्य दो रेफ हैं तिनका अवयविता संबंध भ्रमर पद मैं है ता पद का शक्ति रूप संबंध अपने वाच्य मधुप मैं है यांते शक्य संबंधी जो भ्रमर पद तांका संबंध होने तें शक्य का परंपरा संबंध है यांते लक्षित लक्षणा है॥ न्याय वैशेषिक मत मैं वाक्य की लक्षणा नहीं मानै हैं॥ काहे तैं शक्य संबंध कूं लक्षणा कहे हैं॥ पद समुदाय रूप वाक्य की किसी अर्थ मैं शक्ति नहीं॥ मीमांसा तथा वेदांत मत मैं वाक्य की लक्षणा मानै हैं॥ पदन का शक्य ही वाक्य का शक्य है समुदाय प्रत्येक पद सैं भिन्न नहीं अथवा शक्य संबंध रूप लक्षणा नहीं किंतु बोध्य संबंध रूप लक्षणा कहे हैं॥ जैसे पद शक्ति वृत्ति सें बोध्य है तैसे परस्पर संबंध सहित पदार्थ रूप वा पदार्थन का संबंध रूप वाक्यार्थ वी वाक्य बोध्य है यांते पद बोध्य संबंध रूप लक्षणा जैसे पद की होवै है तैसे वाक्य बोध्य संबंध रूप लक्षणा वाक्य की वी होवै है या मत मैं द्विरेफ समुदाय की दो रेफ वाले पद मैं लक्षणा॥ सिंहो देवदत्तः या स्थान मैं सिंह सें अभिन्न देवदत्त है॥ शूरता का अभेद मानैं तब तो सिंह की शूरता का देवदत्त मैं अधिकरणता संबंध हैं दोनू शूरता का परस्पर भेद मानैं तौ सिंह

की शूरता का पुरुष में स्वसजातीय शूरताऽधिकरण ता संबंध है॥ लक्षित कहिये लक्षणा वृत्ति सें। जो प्रतीत होवै तांकी लक्षणा यह लक्षित लक्षणा शब्द का अर्थ है॥ लक्षित कहिये शक्य संबंधी की लक्षणा कहिये संबंध इस रीती सें शक्यसंबंधी का संबंध षष्ठी समास मानें हैं॥ औ तृतीय समासलक्षितेन लक्षणा लक्षित लक्षणां लक्षितेन कहिये शक्य संबंधी द्वारां लक्षणा कहिये शक्य का संबंध॥ अवयव शक्ति सें जो शब्द अपनें अर्थ कूं जनावैताकूं योगिक शब्द कहे हैं जैसे पाचक शब्द है पाच् अवयवका पाक अर्थ है अक अवयवका करता अर्थ है॥ अवयव शक्ति कूं योग कहे हैं ॥लक्षित शब्द के लक्ष औ इत् दो अवयव हैं लक्ष शब्द का अर्थ लक्षण है इत् शब्द का अर्थ संबंधी है ॥ जहां शक्य का परंपरा संबंध है तांहांबी शक्य संबंधत्व रूप स्वलक्षण वाली लक्षणा है॥ लक्षणा के लक्षण में संबंध मात्र प्रविष्ट है॥ यह अभिप्राय है शक्य साक्षातत्व विशिष्ट संबंधत्व रहितां केवल शक्य संबंधत्व रूप लक्षण वती लक्षणा लक्षित लक्षणां यांते केवललक्षणा का संग्रह होवै नहीं॥ तीसरी गौणी वृत्ति है पद के शक्य अर्थ मैं जो गुण होवै तिस वाले अशक्य अर्थ मैं पद की गौणी वृत्ति है जैसे सिंहो देवदत्तः॥ चौथी व्यंजना वृत्ति अलंकार ग्रंथन मैंलिखी है तांका उदाहरण विषंभूंक्ष्व यह वाक्य है शत्रु गृह तें भोजननिवृत्ति वाक्य का-

व्यंग अर्थ है व्यंजना वृत्ति सें जो प्रतीत होवे सो व्यंग्य अर्थ कहिये है॥ संध्या काल मैं नाना कार्य मैं प्रवृत्ति निमित्त किसीने सूर्योऽस्तंगतः यह वाक्य उच्चारण कीया॥ तिस वचन कों सुन कर नाना पुरुष तिस काल मैं अपने अपने कर्तव्य कों जान के प्रवृत्त होवें हैं॥ तहां अनेक पुरुषन को कर्त्तव्य का बोध व्यंजना वृत्ति सें होवे है॥ ईस रीति सें व्यंजना वृत्ति के अनेक उदाहरण काव्य प्रकाशादि ग्रंथन में मम्मट आदिकां नें लिखे हैं॥ सो बहुत उदारण शृंगार रस के हैं इस ते नहीं लिखे॥ न्याय ग्रंथन मैं व्यंजना वृत्ति का भी लक्षणा में अंतर्भाव कह्या है और जो आलंकारिक कहे हैं शक्य संबंधी अर्थ का तो लक्षणा वृत्ति सें बोध संभवै है औ शक्य अर्थ के असंबंधी अर्थ मैं लक्षणा संभवै नहीं॥ समधानं साक्षात् परं परा दो संबंध हैं साक्षात्कि नों का है परंपरा सर्व पदार्थन का है गोत्व अश्वत्व का वी परस्पर व्यधिकरणता संबंध है॥ घटाभाव औ घट परस्पर विरोधी हैं तो वी घटाभाव का घट मैं प्रतियोगिता संबंध है॥ घट का अपने अभाव मैं स्व वृत्ति प्रतियोगिता निरूपकता संबंध है॥ और तीन प्रकार की लक्षणा है जहां शक्य की प्रतीति नहीं होवे केवल शक्य संबंधि की प्रतीति होवे तहां जहत् लक्षणा होवे है जैसे विषंभुंक्ष्व या स्थान मैं शक्य जो विष भोजन ताकूं त्याग के शक्य संबंधि भोजन निवृत्ति की प्रतीति होने तें जहत् लक्षणा है॥ तात्पर्यानुपपत्ति

लक्षणा में बीज है यष्टीः प्रवेशय या वाक्य में बीता- त्पर्य अनुपपत्ती है॥ तात्पर्यानुपपत्ति लक्षणा में बीज है अन्वयानुपपत्ति नहीं॥ गंगायां ग्रामः या- स्थानमैं बी संभवै है॥ काकेभ्योदधि रक्षतां सहित॥ शक्य संबंधी की जहां प्रतीति होवै तहां अजहत लक्षणा है॥ छत्रिणोयांति छत्रिपद की छत्रि संयु क्त एक सार्थ में अजहत् लक्षणा॥ सोयं देवदत्तः भागत्याग लक्षणा ईहां परोक्षवस्तु तत्पदका अर्थ है अ परोक्षवस्तु इदं पद का अर्थ है दकारादिवर्णवि शिष्ट नाम वाला पुरुश शरीर देवदत्तपद का अर्थ है॥ तत्पदार्थ का इदं पदार्थ सैं अभेदतत्पदोत्तर विभक्ति का अर्थ है इदंपदार्थ का देवदत्त पदा- र्थ सें अभेद इदं पदोत्तर विभक्ति का अर्थ है अथ वा तत्पद औ इदं पद सैं उत्तर विभक्ति निरर्थक- है॥ समान विभक्ति वाले पदन के सन्निधान सें- पदार्थन का अभेद प्रतीत होवै है यांते परोक्ष व- स्तु सें अभिन्न अपरोक्षवस्तु स्वरूप देवदत्त नाम वाला शरीर है यह वाक्य के पदन का शक्य अर्थ है॥ सो उष्ण शीतल है या की न्याई बाधित है बा धित अर्थ में वक्ता का तात्पर्य संभवै नहीं यांते तत्प द इदंपद कै शक्य में परोक्षता अपरोक्षता भाग कू त्याग कै वस्तु भाग में लक्षणा होने तें भाग लक्ष णा है॥ इस रीति सें तीन भांति की लक्षणा॥ प्रयो- जन वति लक्षणा औ निरूढ लक्षणा भेद तें दोप्र- कार की है॥ गंगातीरं शीतपावनत्वादिमत् गं-

गा पद बोध्यत्वात् गंगावत् यह अनुमान है सर्वथा प्रयोजनवतीलक्षणा हैं॥ औ नीलो घट इत्यादि वाक्यन कूं सुणे तेहीं सर्व पुरुषन कूं गुणी प्रतीति अति प्रसिद्ध है यांते नीलादिक पदन की गुणी। में प्रयोजन शून्य लक्षणा होने तें निरूढ लक्षणा है निरूढ लक्षणा शक्ति के सदृश होवे है॥ औ यह नियम है जो पद में जिस अर्थ की वृत्ति होवे तां पद में तिस अर्थ विषे स्मृति होवे है तिस अर्थ विषे ही तां पद में शाब्द बोध होवे है॥ औ महावाक्यतें जिज्ञासू कूं अखंड ब्रह्म का बोध हो वै ऐसा ईश्वर का अनादि तात्पर्य है यांते निरूढ लक्षणा है प्रयोजनवती नहीं॥ इहां ऐसी शंका होवे है॥ वाच्य अर्थ का लक्ष्य चेतन सें संबंध मानैं तौ लक्ष्य अर्थ में असंगता की हानि होवेगी संबंध नहीं मानैं तौ लक्षणा बनैं नहीं काहे तें शक्य संबंध अथवा बोध संबंध कूं लक्षणा कहे हैं सो असंग में संभवै। नहीं तां का यह समाधान है वाच्य अर्थ में चेतन औ जड दो भाग हैं तहां चेतन भाग का लक्ष्य। अर्थ में तादात्म संबंध है वाच्य में जड भाग का लक्ष्य चेतन में अधिष्ठानता संबंध है कल्पित के संबंध सें अधिष्ठान का स्वभाव विगडै नहीं॥ अन्य शंका तत्पद की अखंड चेतन में लक्षणा मानैं त्वं पद की बी मानें तौ पुनरुक्ति दोष होने तैं घटो घटः की न्याईं अप्रमाण वाक्य होवेगा दोनो पदन का लक्ष्य अर्थ जुदा मानैं तौ अभेद बोधकता नहीं हो।

वैगीं समाधान माया औ अंतःकरण विशिष्ट तो त
त्पद औत्वं पद का शक्य हैं उपहित लक्ष हैं जो ब्र
ह्म चेतन दोनूं पदन का लक्ष होवै तो पुनरुक्ति दो
ष होवै॥ सो उपाधि के भेद तैं भिन्न हैं पुनरुक्ति न
हीं उपहित दोनूं परमार्थ सें अभिन्न हैं इस रीती
सें तत्पदार्थ औत्वं पदार्थ का उद्देश्य विधेय भाव
मान कै अभेद बोधकता निर्दोष है॥ कोई अधु
निक ग्रंथकार लक्षणा बिना शक्तिवृत्ति सें ही महा
वाक्यन कूं अद्वितीय ब्रह्म की बोधकता मानै हैं॥
विशिष्टवाचक पद के अर्थ का अन्य पद के विशि
ष्ट अर्थ में जहां संबंध नहीं संभवै तहां पद की शक्ति
सें ही विशेषण कूं त्याग कै विशेष्य की प्रतीति होवै
है जैसे अनित्यो घटः तैसे गेहे घटः यावाक्य में घट
त्व रूप विशेषण कूं त्याग कै विशेष्य व्यक्ति मात्र की
घट पद सें स्मृति औ शाब्द बोध होवै है तैसे घट
रूप॥ पुष्पवंत पद सें चंद्र कूं त्याग कै सूर्य का औ
सूर्य कूं त्याग कै चंद्र का बोध होवै नहीं शक्तिवाद
में लिखा है जिस धर्म वाले अर्थ में पद की शक्ति
होवै उस तैं न्यून वा अधिक अर्थ लक्षणा तैं प्रती
त होवै है शक्ति सें उस धर्म वाले अर्थ की ही प्रती
ति होवै है॥ उपनिषद ग्रंथन कूं विचारै तिन का
तात्पर्य अहेय अनुपादेय ब्रह्म बोध में है उपा
सना विधी में तात्पर्य नहीं॥ उपक्रम उपसंहार की
एकरूपता॥१॥ अभ्यास॥२॥ अपूर्वता॥३॥ फल
॥४॥ अर्थवाद॥५॥ उपपत्ति॥६॥ यह षट्वैदिक

वाक्य के तात्पर्य के लिंग हैं॥ आकांक्षा ज्ञान योग्य
ता ज्ञान तात्पर्य ज्ञान आसत्ति ये च्यार सहकारि हैं
एक पदार्थ का पदार्थांतर सें अन्वय बोध का अभा
व आकांक्षा कहिये है अय मेति पुत्रो राज्ञः पुरुषो
पसार्यतां॥ स्थूल रीति यह है आकांक्षा नाम इ
च्छा का है॥ सो यद्यपि चेतन मैं होवै है॥ तथापि॥
पद के अर्थ का जितनें काल पदार्थांतर सें अन्वय
का ज्ञान होवै नहीं इतने अपनें अर्थ के अन्वय वा॥
स्ते पदांतर की इच्छा सदृश प्रतीत होवै है॥ एक प
दार्थ का पदार्थांतर मैं संबंध कूं योग्यता कहे हैं जो
शाब्द बोध मैं योग्यता हेतु नहीं होवै तौ वन्हि नासिं
चति याबाक्य तें शाब्द बोध हुया चाहिये॥ वक्ता॥
की इच्छा कूं तात्पर्य कहे हैं जो तात्पर्य ज्ञान शाब्द बो
ध का हेतु नहीं होवै तौ सैंधव मान य भोजन समय
मैं अश्व का बोध औ गमन समय मैं लवण का बो
ध हुया चाहिये॥ वेदांत परिभाषा मैं शुक वाक्य मैं
तिस बोध जनन मैं योग्यता कूं तात्पर्य कह्या है॥ शु
क वाक्यं न तात्पर्यवत् प्रसिद्ध है॥ आसत्ति बी शा॥
ब्द बोध की हेतु है न्याय के ग्रंथन मैं पदन की समी
पता कूं आसत्ति कहे हैं व्यवहित पदन के अर्थों का
अन्वय बोध होवै नहीं जैसे 'गिरि भुक्तं वन्हिमान
देवदत्तेन' या वाक्य तें अन्वय बोध होवै नहीं' किंतु
गिरि र्वन्हिमान् भुक्तं देवदत्तेन' ऐसा कहे शाब्द॥
बोध होवै है॥ औ पद के संबंध सें पदार्थ की स्मृ॥
ति कूं शाब्द बोध का हेतु कहैं तौ सकल पदन का-

आकाश मैं समवाय संबंध है और आत्मा मैं स-
कल पदन का स्व अनुकूलकृति संबंध है यांते।
शक्ति वा लक्षणा वृत्ति रूप पद के संबंध तैं प-
दार्थ की स्मृति शाब्द बोधका हेतु है॥ स्वपद आ
त्म पद का शक्ति रूप संबंध आत्मा मैं है यांते आ
काश पद सहित वाक्य तैं आकाश का आत्मपद
सहित वाक्य तैं आत्मा का शाब्द बोध होवे है॥ ऐ
सा कहैं वीघटमानय यावाक्य तैं जो बोध होवे तां
बोधकी उत्पत्ति घटः कर्मता आनयनं कृतिः इत
ने पद तैं हुयी चाहिये काहे तैं दोनूं वाक्यन के प-
दन की शक्ति समान है॥ यांके विषै यह हेतु है यो
ग्य पद की वृत्ति सें जो पदार्थ की स्मृति होवे तां का
शाब्द बोध होवे है योग्यता अयोग्यता अनुभव के
अनुसार अनुमेय है अथातो ब्रह्म जिज्ञासा व्याख्या
नकारो ने विचार मैं जिज्ञासा पद की लक्षणा कही है
कर्तव्य पद का अध्याहार कह्या है यांते ब्रह्म ज्ञान के
अर्थ वेदांत वाक्यन का विचार कर्तव्य है यह सूत्र
का अर्थ है तथापि विचार वाचक पद कूं त्याग के
लाक्षणिक जिज्ञासा पद के प्रयोग तैं सूत्रकार।
का वाच्य औ लक्ष दोनूं अर्थन मैं तात्पर्य है ब्रह्म
जिज्ञासा ब्रह्म बोधका हेतु है यह वाक्य का अर्थ है
॥ और नैयायिक मत मैं शब्द का तीसरे क्षण मैं नाश
होवे है॥ गौः यावाक्य मैं पुरुष की कृति सें नाभि दे-
श मैं वायु मैं क्रिया होय के गकार का जनक जिह्वा
मूल मैं वायु का संयोग होय के औकार का जनक

कंठ ओष्ठ सें वायु का संयोग होवै है तिस तैं अनंत
र विसर्ग का जनक कंठ सें वायु का संयोग होवै है क
म ते वर्ण होवै हैं॥ नाशका हेतु स्वोत्तर शब्द है अं
त्य शब्द का उपांत्य शब्द सें सुंदोपसुंदन्यायतैं ना
श होवै है अंत शब्द के नाश मैं उपांत्य शब्द का ना
श हेतु है॥ मीमांसा मत मैं वर्ण नित्य हैं यां ते वर्ण
का समुदाय रूप वेद विनित्य है नैयायिक मत मैं
जो वर्ण की उत्पत्ति के हेतु हैं मीमांसक मत मैं अ
भिव्यक्ति के हेतु हैं॥ वेदांत मत मैं सृष्टि के आदिका
ल मैं सर्वज्ञ ईश्वर के संकल्प मात्र तैं वेद की उत्पत्ति
होवै है॥ यांते श्वास की न्याई अनायासतैं ईश्वर वे
द कूं रचे है॥ इति श्री वृत्ति प्रभाकर सार संग्रहे शब्द
प्रमाण निरूपणं नाम तृतीयः प्रकाशः॥ ३॥ समाप्तः
॥ श्री काशी विश्वनाथाय नमः॥ ॐ ॥ ॐ ॥

श्रीगणेशायनमः॥
श्री शिवोजयति॥

अथ उपमान प्रमाण निरूपणं नाम चतुर्थ प्रकाश प्रारम्भः

उपमिति प्रमा का करण उपमान प्रमाण कहिये
है न्यायुरीति सें उपमिति उपमान का यह स्वरू
प है संज्ञी मैं संज्ञा की वाच्यता का ज्ञान उपमिति
कहिये है व्यापार वाला असाधारण कारण होवै
सो उपमान कहिये है कोई नगरवासी पुरुष गा·

उपमिति का लक्षण

वय शब्द के वाच्य कूं नहीं जान के आरण्यक पुरुषतें की दृश गवय होवै है॥ ऐसा प्रश्न करै तब गो के सदृश गवय होवै है ऐसा आरण्यक पुरुष का वचन सुन के वाक्यार्थ अनुभव कर के बन में गो सदृश गवय कूं देष के गो के सदृश गवय होवै है इस रीति सें वाक्यार्थ का स्मरण करै है तिस तैं अनंतर दृष्ट पशु मैं गवय पद की वाच्य ता जानै है तहां पशु विशेष मैं गवय पद वाच्यता का ज्ञान उपमिति हैं आरण्यक पुरुष बोधित वाक्य के अर्थ का शाब्द अनुभव करण है गोसदृश पिंड कूं देष के वाक्यार्थ की स्मृति व्यापार है गो सदृश पिंड का प्रत्यक्ष संस्कार का उद्बोधक होने तें सहकारी हैं यातें वाक्यार्थानुभव उपमान है वाक्यार्थ स्मृति व्यापार हैं जैसे आकांक्षादिक शाब्द के सहकारी हैं तैसे गो सदृश पिंड का प्रत्यक्ष सहकारी है उपमिति फल है यह सांप्रदायिक नैयायिकन का मत है॥ औ नवीन नैयायिक यह कहे हैं गोसदृश पिंड का प्रत्यक्ष सहकारी मान्या है सो उपमान है औ वाक्यार्थ स्मृति व्यापार हैं गवय पद की वाच्यता का ज्ञान उपमिति रूप फल है जैसे सादृश्य ज्ञान तें उपमिति होवै है तैसे विधर्म ज्ञान सें बी होवै है जहां खड्ग मृग पद के वाच्य कूं नहीं जाणता आरण्यक पुरुष तें उष्ट्र बिधर्मा शृंगसहित नासिका वाला खड्ग मृग पद का वाच्य है इस वाक्य कूं सुन के वाक्यार्थ अनुभव सें उत्तर बन में जाय के उष्ट्र

विधर्म खड्गमृग के प्रत्यक्ष सें उत्तर गैंडे मैं खड्गमृग पद की वाच्यता जाने है॥ वेदांत मत मैं उपमिति उपमान का अन्य स्वरूप है॥ ग्राम विषे गो व्यक्ति कूं देखनें वाला बन मैं जाय के गवय कूं देखे तब यह पशु गो के सदृश है ऐसा प्रत्यक्ष होवै है तिस तैं अनंतर मेरी गौ इस पशु के सदृश है ऐसा ज्ञान होवै है तहां गवय मैं गो सादृश का ज्ञान उपमान प्रमाण कहिये है औ गो मैं गवय का सादृश ज्ञान उपमिति कहिये है या मत मैं वी उपमिति का करण ही उपमान कहिये है॥ न्याय की रीति सें सिद्धांत के अनुकूल उदाहरण मिले हैं आत्म पद का अर्थ के साहै या प्रष्ठा का देहादि वे धर्म्य वान आत्मा है॥ औ सादृश्य ज्ञान जन्य ज्ञान कूं ही उपमिति मानै सो आत्मा मैं किसी का सादृश्य नहीं यद्यपि असंगतादिक धर्मन तैं आकाश के सदृश्य आत्मा है यांतै आकाश मैं आत्मा का सादृश्य ज्ञान उपमान है आत्मा मैं आकाश का सादृश्य ज्ञान उपमिति है यह सिद्धांत की उपमिति का संभव हैं तथापि जिस अधिकरण मैं जिस पदार्थ के अभाव का ज्ञान होवे तहां अभाव ज्ञान मैं भ्रम बुद्धि हुये बिना तिस अधिकरण मैं तां पदार्थ का ज्ञान होवै नहीं जैसे आत्मा मैं कर्तृत्वादिकन का अभाव ज्ञान हुयां न्यायादिक शास्त्र सुनै वी प्रथम ज्ञान मैं भ्रम बुद्धि हुयां बिना कर्त्ता भोक्ता आत्मा है ऐसा ज्ञान होवै नहीं इस रीति सें जिस काल मैं गुरुवाक्यन

तें जिज्ञासु कूं ऐसा दृढ निश्चय हुया है ॥ आ-
काशादिक सकल प्रपंच गंधर्वनगर की न्याई
दृष्ट नष्ट स्वभाव है। तातै विलक्षण स्वभाव आ
त्मा है आकाश औ आत्माका सादृश्यज्ञान संभवे न
हीं ॥ सर्वथा नैयायिक रीतिकी उपमितिमें विद्वेष
होवै तौ उपमितिका यह लक्षण करणाचाहिये ॥
सादृश्यज्ञान जन्यज्ञान अथवा वैधर्म्यज्ञान जन्य-
ज्ञान इन दोनूंमैं कोई एकहोवै सो उपमिति कहि-
येहै ॥ खड्गमृगमै उष्ट्रके वैधर्मज्ञानतै उष्ट्रमें खड्ग-
मृगका वैधर्म्यज्ञान होवैहै ॥ पृथिवीमें जलके वैध-
र्म्यज्ञानतै जलमैं पृथिवीका वैधर्म्यज्ञान होवैहै ॥
यांते उष्ट्रमैं खड्गमृगका वैधर्म्यज्ञान औ जलमैं पृ-
थिवीका वैधर्म्यज्ञान उपमितिहै। ईहां खड्गमृग
मैं उष्ट्रका वैधर्म्यज्ञान औ पृथिवीमैं जलका वैध-
र्म्यज्ञान करण होनेतैं उपमानहै। और विपरीत-
वी उपमान उपमिति भावहै। इंद्रिय संबंद्धमें सा-
दृश्यज्ञान उपमानहै। औ इंद्रिय व्यवहितमैं सा-
दृश्यज्ञान उपमितिहै ॥ औ वेदांतपरीभाषामें तां-
के पुत्रने जहां। कमलेन लोचनमुपमिनोमि।
इस रीतिसें उपमान उपमेय भाव होवै। तिसी स्था
नमैं उपमान प्रमाण होवैहै। वैधर्म्य ज्ञान होवै।
तहां उपमान उपमेय भाव होवै नहीं ॥ मुखं।
चंद्रेण उपमिनोमि ऐसी प्रतीति होवैहै। औ मु-
खमैं चंद्रके सादृश्यका प्रत्यक्ष ज्ञान है उपमिति
नहीं यांते उपमिनोमि इस व्यवहारका विषय उ-

पमा अलंकार है। जहां उपमान उपमेयकी समा
न शोभा होवे तहां उपमा अलंकार होवैहै॥ औ
शास्त्र के संकेतकूं परिभाषा कहेहैं॥ परिभाषा
तैं बोधक शब्दकूं पारिभाषिक कहेहैं। जैसे छं
दो ग्रंथनमैं। पंच षट् सप्त मैं बाण रस मुनि श
ब्द पारिभाषिक हैं। तैसें उपमिति शब्दबी न्या
य औ अद्वैतशास्त्रमैं भिन्न भिन्न अर्थमैं पारि
भाषिक हैं॥ औ भेदसहित समानधर्मनकूं साद्द
श्य कहेहैं जैसे गवयमैं गोके भेद सहित समान
अवयव गवयमैंहै। सोई गोका सादृश्यहै। चंद्र
के भेदसहित आल्हाद जनकतारूप समान धर्म
मुखमैं हैं सोई मुखमैं चंद्रका सादृश्यहै॥ औ उ
पमितिका करण उपमान कहियेहै सो न्यायमत
मैं गवय पदकी वाच्यताज्ञान उपमिति पदका पा
रिभाषिक अर्थहै। तांका करण वाकार्थ अनुभव
वा सादृश्यविशिष्ट पिंडका प्रत्यक्षहै॥ अद्वैत।
मतमैं सादृश्यज्ञान जन्यज्ञान औ वैधर्मज्ञान ज
न्यज्ञान उपमिति पदका पारिभाषिक अर्थहै। तां
का करण सादृश्यज्ञान औ वैधर्मज्ञानहै॥ औ जै
से व्यापारमैं। व्यापारवता नहींहै तैसे व्यापार सें।
भिन्नताबी व्यापारमैं नहींहै। इसरीतिसैं व्यापार
भिन्न असाधारणकारण करण कहिये हैं। सो निर
व्यापार होवैं अथवा सव्यापार होवैं। प्रत्यक्ष अनु
मान शब्द यह तीन तो प्रत्यक्ष प्रमा अनुमितिप्र
मा शाब्दीप्रमाके व्यापारवाले कारण हैं। उपमान

अर्थापत्ति अनुपलब्धि यह तीन उपमिति आदिक प्रमाके निरव्यापार कारण हैं ॥ सिद्धांत मैं इंद्रिय संबंधिगवयमैं गोका प्रत्यक्षरूप सादृश्य ज्ञान उपमान प्रमाण है। औ व्यवहित गोमैं गवयका सादृश्यज्ञान उपमितिप्रमा है। तैसे इंद्रिय संबंधि पशुमैं व्यवहित पशुका वैधर्म्यज्ञान तो उपमानप्रमाण है। औ व्यवहित पशुमैं इंद्रियसंबंधिपशुका वैधर्म्यज्ञान उपमितिप्रमा है। इस प्रकारसैं उपमानतैं उपमितिकी उत्पत्तिमैं कोई व्यापार संभवै नहीं ॥ उपमिति प्रमाके करणकूं उपमानप्रमाण कहै हैं ॥ विरुधधर्मवालेकूं विधर्मा कहै हैं ॥ वैधर्म्यकूं विरुधधर्म कहै हैं ॥ प्रपंचमैं ब्रह्मकी विधर्मता का ज्ञान उपमान है औ प्रपंचतैं विधर्म ब्रह्म है यह उपमान प्रमाणका फल उपमिति ज्ञान है ॥ इतिश्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य यतिवर्य्य श्रीस्वामीरामगिरि शिष्येण काशीवासिनी अनंतानन्दगिरिणा विरचिते वृत्तिप्रभाकरसारसंग्रहे उपमान प्रमाण निरूपणंनाम चतुर्थः प्रकाशः ॥ ४ ॥ समाप्तः ॥

श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीशिवोजयति ॥

अथ अर्थापत्तिप्रमाणनिरूपणंनाम पंचमप्रकाशःप्रारम्भः

नैयायिकमतमैं पूर्वउक्त चारही प्रमाण हैं ॥ व्य-

तिरेकि अनुमानमैं अर्थापत्ति प्रमाणका अंतर भावहै औ सिद्धांतमैं केवल व्यतिरेकि अनुमानका अंगीकार नहीं॥ यांते अर्थापत्ति भिन्न प्रमाणहै॥ केवलव्यतिरेकि अनुमानका प्रयोजन अर्थापत्तिसें सिद्ध होवैहै। जहां अन्वय व्याप्तिका उदाहरण मिलै नहीं औ साध्याभावमैं हेतुके अभावकी व्याप्तिका उदाहरण मिलै सो केवलव्यतिरेकि अनुमान कहियैहै॥ जैसे पृथिवी इतरभेदवती गंधवत्वात् यास्थानमैं यत्रगंधवत्वंतत्रेतरभेदः या अन्वयव्याप्तिका उदाहरण मिलै नहीं काहेतैं पक्षसें भिन्न दृष्टांत होवैहै। ईहां सकल पृथिवी पक्षहै। तासें भिन्न जलादिकनमैं इतरभेद औ गंध रहै नहीं यांते यह केवलव्यतिरेकि अनुमानहै॥ यत्र इतर भेदाभावः तत्रगंधाभावः यथाजले इसरीतिसें साध्याभावमैं हेतुके अभावकी व्याप्तिज्ञानका हेतु जो सहचारज्ञान सो जलादिकनमैं होवैहै यांते जलादिक उदाहरणहैं व्याप्तिज्ञानका हेतु सहचारज्ञान जहां होवै सो उदाहरण कहियेहैं॥ अन्वयिमैं हेतु व्याप्य होवैहै। साध्यव्यापक होवैहै। व्यतिरेकिमैं साध्याभाव व्याप्य होवैहै। हेत्वाभाव व्यापक होवैहै॥ जहां साध्याभाव हेत्वाभावके सहचारका उदाहरण मिलै नहीं सो केवलान्वयि अनुमान कहियैहैं। जैसे घटः पदशक्तिमान् ज्ञेयत्वात् पटवत् न्यायमतमैं ज्ञेयता औ पदशक्ति सर्वमैं है। यांते अभावनके सहचारका उदा

हरण मिले नहीं ॥ जहां दोनूंके उदाहरण मिलें सो अन्वयव्यतिरेकी अनुमान कहिये हैं ऐसा प्रसिद्ध अनुमान है ॥ पर्वतोवन्हिमान् । याकूं प्रसिद्धानुमान कहेहैं । ईहां अन्वयि के सहचारका उदाहरण महानसहै । व्यतिरेकिके सहचारका उदाहरण महाह्रदहै । इसरीतिसें तीन प्रकारका अनुमान नैयायिक कहेहैं ॥ वेदांतमतमैं केवलव्यतिरेकिका प्रयोजन अर्थापत्ति सें होवेहै । इतर भेदबिना गंधवत्ता संभवै नहीं । यांते गंधवत्ताकी अनुपपत्ति इतरभेदकी कल्पना करेहै ॥ औ केवलान्वयि अनुमान कोई है नहीं । काहेतें सर्व पदार्थनका ब्रह्ममैं अभाव है । यांते व्यतिरेक सहचारका उदाहरण ब्रह्म मिले है । यद्यपि वृत्तिज्ञानकी विषयतारूप ज्ञेयता ब्रह्म विषयहै । तांका अभाव ब्रह्मविषे बनै नहीं । तथापि ज्ञेयतादिक मिथ्या हैं मिथ्यापदार्थ औ तांका अभाव एक अधिष्ठानमैं रहेहैं । यांते जिस कूं नैयायिक अन्वयिव्यतिरेकि कहेहैं । सोई अन्वयिनाम एक प्रकारका अनुमानहै ॥ अर्थापत्तिका यह स्वरूपहै ॥ उपपादककल्पना का हेतु उपपाद्य ज्ञानकूं अर्थापत्ति प्रमाण कहेहैं । उपपादक ज्ञानकूं अर्थापत्ति प्रमा कहेहैं । उपपादक संपादक पर्याय शब्दहैं । उपपाद्य संपाद्य पर्यायहैं ॥ अर्थापत्ति दो प्रकाप्रकारकी है ॥ एक दृष्ट अर्थापत्तिहै दूसरी श्रुत अर्थापत्तिहै जहां दृष्ट उपपाद्यकी अनुपपत्ति-

के ज्ञानतैं उपपादककी कल्पना होवै। जैसे दिवाऽभोजी स्थूलमैं रात्रि भोजनका ज्ञान दृष्टार्थापत्ति है काहेतैं उपपाद्य स्थूलता दृष्ट है। औ जहां श्रुत उपपाद्यकी अनुपपत्ति के ज्ञान तैं उपपादक की कल्पना होवै। तहां श्रुतार्थापत्ति कहियेहै जैसे। गृहेऽसत् देवदत्तो जीवति। या स्थानमैं गृहमैंऽसत् देवदत्त का जीवन उपपाद्य है। गृहतैं बाह्य सत्ता उपपादक है॥ अभिधानानुपपत्ति औ अभिहितानुपपत्ति भेदतैं श्रुतार्थापत्ति दो प्रकारकी है। द्वारं अथवा पिधेहि अन्वयबोध फल वाले शब्द प्रयोग कूं अभिधान कहेहैं॥ जहां सारे वाक्य का अर्थ अन्य कल्पन बिना अनुपपन्न होवै तहां अभिहितानुपपत्ति रूप श्रुतार्थापत्ति कहिये है। जैसे स्वर्गकामो यजेत् या वाक्य का अर्थ अपूर्व कल्पन बिना अनुपपन्न है। यांते अभिहितानुपपत्ति रूप श्रुतार्थापत्ति है। ईहां यागकूं स्वर्ग साधनता उपपाद्य है। तांकी अनुपपत्तिसैं। उपपादक अपूर्वकी कल्पना है। स्वर्ग साधनता दृष्ट नहीं किंतु श्रुत है। यांते श्रुतार्थापत्ति है॥ इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य यतिवर्य्य श्रीस्वामीरामगिरिशिष्येण काशीवासिना अनंतानन्दगिरिणा विरचिते वृत्तिप्रभाकरसारसंग्रहे अर्थापत्ति प्रमाण निरुपणं नाम पंचमः प्रकाशः॥५॥ समाप्तः॥ श्रीशिवो जयति॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

श्रीगणेशायनमः॥
श्रीशिवोजयति ॥

अथ अनुपलब्धिप्रमाणनिरूपणंनाम षष्ठप्रकाशप्रारम्भः ६

अनुपलब्धिप्रमाणतैं अभावकी प्रमा होवैहै।यांते अभावकी प्रमाके असाधारण कारणकूं अनुपलब्धिप्रमाणकहैहैं॥ निषेधमुख प्रतीतिका विषय होवै। अथवा प्रतियोगि सापेक्ष प्रतीतिका विषय होवै। सो अभाव कहिये हैं॥ न्याय ग्रंथन मैं अभावाभावरूपता अभावकी प्रति योगिताका स्वरूप अचार्यनें लिख्याहै॥ संबंधकी औ सादृश्यकी प्रतियोगितासें विलक्षण प्रतियोगितावाला-जांका प्रतियोगि होवै सो अभाव कहियेहै॥ सो अभाव दो प्रकारकाहै। एकसंसर्गाभावहै। दूसरा अन्योन्याभावहै। संसर्गाभावके चार भेदहैं प्रागभाव १ प्रध्वंसाभाव २ सामयिकाभाव ३ अत्यंताभाव४ इसरीतिसें चारप्रकारका संसर्गाभाव औ अन्योन्याभाव मिलके पांचप्रकारका अभावहै॥कपालमैं घटकी उत्पत्तिसें पूर्व घटका अभावहै औ कचे कपालमैं रक्तरूपकी उत्पत्तिसें पूर्व रक्तरूपका अभावहै सो प्रागभावहै॥ घटकी उत्पत्तिसें उत्तर मुद्गरादिकतें कपालमैं घटका अभावहै सो प्रध्वंसाभाव है॥ नैयायिकमतमैं प्रध्वंसाभाव सादिहै औ अनंतहै॥ प्रागभाव प्रतियोगि ध्वंस इन ती

नूमैं एकका अधिकरणकाल अवश्य होवैहै ॥ प्रागभाव अनादि सांत है ॥ ध्वंस अनंत सादि है ॥ भूतलादिकनमैं जहां कदाचित् घट होवै तहां घट शून्य कालमैं घटका सामयिकाभाव है ॥ वायुमैं रूप कदाचित्वी होवै नहीं यांते वायु मैं रूपका अत्यंताभाव है ॥ घट सें इतर पदार्थनमैं जो घटका भेद सो घटका अन्योन्याभाव है ॥ सामयिकाभाव तो सादि सांत है ॥ अत्यंताभाव अन्योन्याभाव दोनूं अनादि अनंत हैं ॥ वायौ रूपं नास्ति। इस प्रतीति का विषय केवल अत्यंताभाव है। अनंत होनेतैं प्रागभाव नहीं। अनादितासें ध्वंस नहीं। सर्वदा होनेतैं सामयिकाभाव नहीं ॥ कपाले घटो भविष्यति ऐसी प्रतीति घटकी उत्पत्ति सें पूर्व होवैहै। ताका विषय प्रागभावहै। औ घटोध्वस्तः। ऐसी प्रतीति का विषय ध्वंसहै। इसरीतिसें घटकी उत्पत्तिसें प्रथम कपालमैं घटका आत्यंताभाव औ प्रागभाव दोनू हैं तिनमैं। कपाले घटो नास्ति। इस प्रतीतिका विषय कपाल मैं घटका अत्यंताभाव है ॥ औ जां पदार्थका जो संबंध जामैं रहैहै सोपदार्थ तां संबंधसैं तिसमैं रहैहै ॥ औ परमाणु घटकै मध्य जो द्व्यणुकादि कपालांत अवयवी हैं तिनसर्व के प्रागभाव सृष्टितैं प्रथम परमाणुमैं रहैहैं। इसरीति सें प्रागभाव अनादि कहिये उत्पत्ति रहितहै सांतकहिये अंतवाला है ॥ अभावपदार्थका नाश रूप ध्वंस भावरूप होवैहै ताकूं ध्वंस प्रध्वस नो कहैहैं। ध्वंसाभाव प्रध्वं

अवयवहैं तिसमैं द्व्णुक अवयवीका प्रागभावहै। ऐसे उत्तर उत्तर अवयवीका प्रागभावहै ॥

साभाव नहीं कहेहैं। यांते घटके प्रागभावका ध्वं
स सांतहै॥ वेदांत सिद्धांत मैं अनादि औ सांत मा
या है सो अभावनहीं किंतु जगतका उपादानका
रण माया है॥अभाव किसीका उपादानकारण
नहीं॥ यांते प्रागभावके लक्षण मैं अभाव पदके
प्रवेशतैं माया मैं प्राग भाव का लक्षण जावै नहीं।
यांते अतिव्यापति नहीं। यद्यपि माया प्रकृति अ
विद्या अज्ञान यह शब्द पर्याय हैं अविद्या अज्ञान
शब्दनमैं अकार निषेधका वाचकहै। तथापि वि
रोधि भेदवान् अलपवी अकारके अर्थहैं॥ अब्रा
ह्मणो नाचार्य। अनुदरा देवदत्तकन्या॥ वेदांत
वाक्यजन्य ब्रह्माकार वृत्तिकूं विद्याकहेहैं सो मा
याकी विरोधनीहै॥ सादि अनंत जो अभाव सो प्र
ध्वंसाभाव कहियेहैं॥अलक्ष्यमैं लक्षणजावै ताकूं
अति व्याप्ति कहे हैं॥ उत्पत्तिसैंपूर्व। कपाले घटो
नास्ति। इस वाक्यमैं अनुयोगि बोधक कपालप
द सप्तम्यंतहै। प्रतियोगि बोधक घटपद प्रथमां
तहै। तहां प्रागभावकी प्रतीति होवेहै॥ जांसं बं
धसें जो पदार्थ जहांनहोवै तहां तिस पदार्थका
तत् संबंधावच्छिन्नाभाव कहियेहैं॥ और अन्यो
न्याभावका प्रतियोगिता अवच्छेदक एक अभेदसं
बंध है तिस अभेद कूंही नैयायिक तादात्म्य संबंध
कहेहैं। अभेदसंबंधावच्छिन्नाभाव कूंहि अन्योन्या
भाव कहेहैं॥ अन्यसंबंधावच्छिन्नाभावकूं संसर्गा
भाव कहेहैं।अन्योन्याभाव कहैं नहीं। इसरीतिसें

अन्योन्याभावका प्रतियोगितावच्छेदक संबंध एक तादात्म्यनाम अभेद है॥ औ प्रतियोगिता अवच्छेदक संबंध विशिष्टप्रतियोगिका जैसे अत्यंताभाव सें विरोध है। तैसे अन्योन्याभावसें भी विरोध स्पष्ट है॥ नवीनतार्किक सामयिकाभाव कूं नहीं मानै हैं॥ भूतलादिकनमें घटादिकनका जहां सामयिकाभाव कह्या है तहांवी सारे घटादिकनका अत्यंताभाव है॥ सो एक एक अभाव दो प्रकारका है एकभावप्रतियोगिक होवैहै। दूजा अभाव प्रतियोगिक होवैहै। भावका अभाव भावप्रतियोगिक अभाव कहियेहैं। अभावका अभाव अभाव प्रतियोगिक अभाव कहियेहैं॥ जैसे प्रागभाव दोप्रकार का है घटादिकन का कपालादिकन में प्रागभाव भावप्रतियोगिक है। जैसे भाव पदार्थन का प्रागभाव है तैसे अभावकावी प्रागभाव होवैहै। परंतु सादि पदार्थनका प्रागभाव होवैहै। अनादिका प्रागभाव होवैनहीं। अत्यंताभाव अन्योन्याभाव प्रागभाव तो अनादि हैं॥ प्रध्वंसाभावका प्रागभाव होवैहै सो प्रध्वंसाभावका प्रागभाव प्रतियोगिरूप औ प्रतियोगिका प्रागभावरूप होवैहै। जैसे मुद्गरादिकनतें घटका नाश होवै ताकूं घटका प्रध्वंसाभाव कहेहैं। सो प्रध्वंसाभाव मुद्गरादि जन्य है॥ औ प्रागभावका ध्वंस कदाचित् अपने प्रतियोगिका प्रतियोगिरूप है। कदाचित् अपने प्रतियोगिके प्रतियोगिका ध्वंसरूप है। प्रागभाव ध्वंस पृथक नहीं। यह सांप्रदायिक रीतिवी युक्ति विरुद्ध है। का

हैतैं घटकी उत्पत्ति होवै तब घटो जातः। औघट प्रागभावो नष्टः इस रीतिसें विलक्षण दो प्रतीति होवैहै॥ तैसें अत्यंताभाव कै अत्यंताभाव कूंवी प्रथम अभावका प्रतियोगिरूप प्राचीन मानैहैं॥ तहां नवीन ग्रंथकारों नें यह दोष लिष्याहै। जहां भूतलमें घट होवै तहां। भूतले घटोस्ति। भूतले घटात्यंताभावो नास्ति। विधि मुख औ निषेधिमुख प्रतीति का एक विषय संभवै नहीं। औ द्वितीय अत्यंताभाव कूं पृथक् मानें अनवस्था दोष कह्याहै॥ तांका यह समाधान है। द्वितीय अत्यंताभाव प्रथम अत्यंता भावकै प्रतियोगिकै समनियत है। तृतीयाभाव प्रथमाभावकै समनियतहै। औ प्रतियोगिकै समान देश में जो द्वितीयाभाव तांकै समनियत चतुर्थाभावहै। प्रथम तृतीयकै समनियत पंचमाभावहै। इस रीतिसें युगम संख्या के सारे अभावद्वितीयाभावकै समनियतहैं॥ औविषम संख्या के सारे अभाव प्रथमाभावकै समनियत हैं॥ परंतु घटकै समनियतवी द्वितीयाभाव भावरूप घटसें प्रथक् अभावरूपहै॥ इस रीतिसें घट अत्यंताभावका अत्यंताभाववी अभाव प्रतियोगिक अभावहै॥ इसरीतिसें अभाव प्रतियोगिक संसर्गाभावके उदाहरण कहे॥ अभाव प्रतियोगिक अन्योन्याभावके उदाहरण अति स्पष्टहैं। जैसे प्रागभावका अन्योन्याभाव प्रागभावमें नहीं। और सकल पदार्थन में है। काहेतैं भेदकूं अन्योन्याभाव कहेहैं। स्वरूपमैं भेद रहे नहीं। स्वरूपातिरिक्त सर्वमैं सर्वका भेद रहे-

है। यांते प्रागभाव भिन्न पदार्थनमैं प्रागभावका अन्यान्याभावहै औ जितना अंश वेदांत विरुधहै सो दिषावैं हैं। घट प्रागभाव का अधिकरण कपाल सादि औ प्रतियोगि घटबी सादि। प्रागभावकूं अनादिता किसरीतिसें होवै है॥ अन्योन्याभावबी सादिसांत अधिकरणमैं सादिसांतहै औ अनादि पदार्थकी बी ज्ञानसें निवृत्ति अद्वैत वादमैं इष्टहै॥ शुद्धचेतन १ जीव २ ईश्वर ३ अविद्या ४ अविद्या चेतनका संबंध ५ अनादिका परस्परभेद ६ यह षट् पदार्थ अद्वैतमतमैं स्वरूपसैं अनादि कहेहैं। औ शुद्धचेतन विना पंचकी ज्ञानसें निवृत्ति मानैहैं॥ यामैं यह शंका होवैहै जीव ईश्वरकूं अद्वैत वादमैं मायिक कहेहैं। मायाका कार्य मायिक कहियेहैं। जीव ईश्वर मायाके कार्यहैं औ अनादिहैं यह कहना विरुद्धहै॥ समाधान यह मायिक पदका अर्थ नहींहै। किंतु माया की स्थितिकै अधीन जीव ईश्वरकी स्थिति है। माया की स्थिति विना जीव ईश्वरकी स्थिति होवै नहीं। यांते मायिकहैं। मायाकी न्यांई अनादिहैं॥ इसरीतिसें अनादि अन्योन्याभाव सांतहै अनंत नहीं॥ तैसे अत्यंताभावबी आकाशादिकनकी न्यांई अविद्याका कार्य है औ विनाशीहै॥ औ कोई ग्रंथकार अद्वैतवादि एक अत्यंताभावकूं मानै हैं॥ जहां अंधकूं विप्रलंभक वचनतैं घटवाले भूतलमैं घटाभावका ज्ञान होवै सो अभावका परोक्ष भ्रमहै। परोक्ष ज्ञानमैं विषयकी अपेक्षा नहीं। काहेतें अतीत अनागत का बी परोक्ष ज्ञानहै

वैहै॥ प्रत्यक्षयोग्यकी अप्रतीतिकूं योग्यानुपलंभ क
हेहैं। रूपतो प्रत्यक्ष योग्य है औ गुरत्व नहीं। तैसे आ
त्मामें सुखाभाव दुःखाभावका मानस प्रत्यक्ष होवैहै
। परंतु धर्माधर्म केवल शास्त्र वेद्य हैं॥ अनुपलंभ
में योग्यता अयोग्यता इसप्रकार की है। उपलंभाभा
वकूं अनुपलंभ कहेहैं। प्रतीति ज्ञान उपलंभ यह प
र्याय शब्द हैं। प्रतियोगीकी प्रतीतिका अभाव अनु
पलंभ शब्दका अर्थहै॥ यांते इंद्रियसैं घटाभावके प्र
त्यक्षमें घटकी प्रतीतिका अभाव सहकारीहै॥ तहां
घटाभावका ज्ञान प्रमारूप फलहै॥ औ घट ज्ञानका
अभाव घटाभाव प्रमाका सहकारी कारणहै। सो घट
ज्ञानका अभाव योग्य चाहिये। किंतु जहां अनुपलंभ
का उपलंभरूप प्रतियोगि योग्य होवै सो अनुपलं
भ योग्य कहियेहैं॥ अंधकूं अथवा अंधकार में त्व
क् इंद्रियजन्य उपलंभका आरोप होवै। तहां घटा
भावका त्वाच प्रत्यक्ष होवैहै। इसरीतिसें जिस इंद्रिय
के उपलंभका आरोप होवै तिसी इंद्रियतें अभावका
प्रत्यक्ष होवैहै॥ प्राचीन ग्रंथनमें योग्यानुपलंभ इ
सरीतिसें है। जहां प्रतियोगि बिना प्रतियोगिके उप
लंभकी सकल सामग्री होवै। उपलंभ होवै नहीं। तहां
योग्यानुपलंभ है। जैसे आलोकमें घटनहीं तहां यो
ग्यानुपलंभहै। काहेतें घटाभावका प्रतियोगि घट
नहींहै। तिसबिना आलोक संयोग। दूसरा द्रष्टाके
नेत्ररूप। घटके चाक्षुष उपलंभकी सामग्री हो-

नेंते योग्यानुपलंभहै॥ सोयं ऐसा ज्ञान होवै ताकूं प्रत्यभिज्ञा कहेहैं। तत्ता अंशमें स्मृतिरूपहोनेंते परोक्षहै अयं अंश प्रत्यक्षहै॥ अयं अंश प्रत्यक्ष होवैहै ताकूं अभिज्ञा प्रत्यक्ष कहेहैं॥ औ पूर्व अनुभवमें स्मृतिका अन्वय व्यतिरेकहै॥ जैसे दृशमस्त्वमसि। या शब्दसें उत्पन्न हुई वृत्तिके देशमें विषयहै॥ महावाक्य जन्य ब्रह्माकार वृत्ति औ ब्रह्मात्मादोनूं एकदेशमें होवैहैं। यांते महावाक्य जन्य ब्रह्मात्म ज्ञान। प्रत्यक्षहै॥ तैसे ईश्वरज्ञानके उपादान कारण माया के देशमें सर्वपदार्थहैं यांते इंद्रियजन्य नहीं॥ तो भी ईश्वरका ज्ञान प्रत्यक्षहै॥ भूतले अनुपलब्ध्या नेत्रेण घटाभावं निश्चिनोमि। या कहनेका अनुपलब्धि सहित नेत्रसें भूतलमैं घटाभावके निश्चय वाला मैंहूं यह अभिप्राय नहीं। किंतु भूतलमें इंद्रिय जन्य घटकी उपलब्धिके अभावतें घटाभावके निश्चयवाला मैं हूं यह तात्पर्यहै। अभावके निश्चै का हेतु अनुपलब्धिहै॥ वायौ रूपानुपलब्ध्या नेत्रेण रूपाभावं निश्चिनोमि॥ अधिकरण ज्ञानकी इंद्रिय जन्यता अभाव ज्ञानमें भासैहै। यह भेदधिकार वेदांतपरिभाषाका समाधान। सर्वत्र व्यापक नहीं॥ अनुपलब्ध्या रसनेंद्रियेणाम्लरसा भावं आम्रे जानामि॥ कहूं विशेषण मात्र का धर्म। कहूं विशेष्य मात्र का धर्म। कहूं विशेषण विशेष्यदोनूं का धर्म। विशिष्टमें प्रतीत होवैहै। जहां दंड नहीं है पुरुषहै तहां। दंडी पुरुषो नास्ति॥ सिद्धांत में तो कोई ज्ञान मानस।

नहीं काहेतें शुद्धात्मा तो स्वप्रकाश है। तांके प्रकाशमैं किसी प्रमाणकी अपेक्षा नहीं औ सुखादिक साक्षी- भास्य हैं॥ जां वृत्तिमैं आरूढ साक्षी विषयकूं प्रकाशै सो वृत्ति जहां इंद्रिय अनुमानादिक प्रमाण मैं होवै ताहां विषयकूं साक्षीभाष्य नहीं कहे हैं। किंतु प्रमाण जन्य ज्ञान के विषय कहे हैं॥ नेह नानास्ति किंचन। स्वरूपसैं तो प्रपंचकी उपलब्धि होवै है यांते पारमार्थिकत्व विशिष्ट प्रपंचका अभाव है। इसरीतिसैं प्रपंचाभावका ज्ञान अनुपलब्धिसैं होवैं है तांका हेतु अनुपलब्धि प्रमाण है॥ इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य यतिवर्य्य श्रीस्वामीरामगिरि शिष्येण काशीवासिना अनंतानन्दगिरिणा विरचिते श्रीवृत्तिप्रभाकरसारसंग्रहे अनुपलब्धि प्रमाणनिरूपणंनाम षष्ठः प्रकाशः समाप्तः ॥६॥ शुभम् भूयात्॥

श्रीगणेशायनमः॥
श्रीपरमात्मने नमः॥

अथ वृत्तिभेद अनिर्वचनीयख्यातिमण्डनख्यातिखंडन औ स्वतःप्रमात्वप्रमाण- निरूपणंनाम सप्तमः प्रकाशः प्रारभ्यते ७

ग्रंथके आरंभमैं वृत्ति किसकूं कहे हैं या वचनतैं- वृत्तिके लक्षण औ भेदका प्रश्न है। वृत्तिका कारण कौन है यह वृत्तिकी सामग्रीका प्रश्न है। तीसरा प्रश्न वृत्तिके प्रयोजनका है। तिनमैं वृत्तिके प्रयोजनका

निरूपण अष्टम प्रकाशमैं करैंगे॥ कारण समुदाय कूं सामग्री कहेहैं॥ न्याय वैशेषिक मतमैं समवायि असमवायि निमित्त भेदसें कारण तीन प्रकारका है। कार्यके समवायिकारणसें संबंधीजो कार्यका। जनक ताकूं असमवायिकारण कहेहैं। जैसे घटका असमवायिकारण कपालसंयोगहै पटका असमवायि तंतुसंयोगहै। जांके स्वरूपमैं कार्यकी स्थिति होवै तिसकूं उपादानकारण कहेहैं उपादानकूं। समवायिकारण कहेहैं॥ कार्यसें तटस्थहुया कार्यका जनक होवै सो निमित्तकारण कहेहैं॥ संयोगकी उत्पत्ति कहेहैं संयोग दो प्रकारका होवैहै एककर्मजसंयोगहै द्वितीय संयोगजसंयोगहै। जांकी उत्पत्तिमैं क्रिया असमवायिकारण होवै सो कर्मजसंयोग कहियेहै। संयोगरूप असमवायिकारणतें होवै सो संयोगज संयोग कहियेहै। कर्मजसंयोगबी अन्यतरकर्मज औ उभयकर्मज भेदतें दो प्रकारकाहै। संयोगके आश्रय दो होवैहैं तिनमैं एककी क्रियासें जो संयोगहोवै सो अन्यतरकर्मज संयोग कहियेहै। जैसे पक्षीकी क्रियातें वृक्ष पक्षीका संयोग होवै सो अन्यतरकर्मज संयोगकहियेहैं॥ मेष दूयकी क्रियातें जो मेष दूयका संयोगहोवै सो उभय कर्मज संयोगहै मेष दूयके संयोगमैं दोनूं मेष समवायिकारणहैं औ तिनकी क्रिया असमवायिकारणहै॥ और द्विविध कारणवादीकी रीतिसें तो उपादानकारणतें भिन्न जो कारण सो निमित्तकारण है॥ और आत्मा इतर पदार्थ भिन्नः आत्म

त्वात् योन इतर भिन्नः किंत्वितरः स नात्मा यथा घटः। इस व्यतिरेकि अनुमाननैं आत्मामैं इतरभेदका अनुमितिज्ञान होवैहै सो मनन कहियेहै॥ और सर्वंखल्विदं ब्रह्म। द्वितीयाद्वै भयं भवति। मृत्योः समृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति। इत्यादिवाक्यननैं भेदज्ञानकी निंदा करी है॥ अंतःकरणकी ज्ञानरूप वृत्तिका उपादानकारण अंतःकरणहै औ प्रत्यक्षादिक प्रमाण तथा इंद्रियसंयोगादिव्यापार निमित कारण हैं॥ औ ईश्वरके ज्ञानरूप वृत्तिका उपादान कारणमाया है। अदृष्टादिक निमित्तकारणहैं॥ भ्रमवृत्तिका उपादान कारण अविद्याहै निमित्त कारण दोषहैं॥ और कितने ग्रंथनमैं अज्ञान नाशक परिणामकूं वृत्ति कहेहैं। और प्रकाशक परिणामकूं वृत्ति कहेहैं। यांका भाव यह है अस्ति व्यवहारका हेतु जो अविद्या औ अंतःकरणका परिणाम सो वृत्ति कहेहैं॥ चेतनमैं ज्ञान शब्दका प्रयोग तथा प्रमा शब्दका औ अप्रमा शब्दका प्रयोग वृत्ति संबंधसैं होवैहै यांते वृत्तिकूं बहुतस्थानमैं ज्ञान कहेहैं॥ और अंतर प्रत्यक्ष प्रमावी दो प्रकारकी है। एक आत्मगोचरहै दूसरी अनात्म गोचरहै। आत्म गोचरवी दो प्रकारकी है एक शुद्धात्म गोचर है दूसरी विशिष्टात्म गोचरहै शुद्धात्म गोचरवी दो प्रकारकीहै एक ब्रह्मागोचर है दूसरी ब्रह्मगोचरहै। शुद्धः प्रकाशोहं। ऐसी। अंतःकरणकी वृत्ति होवैहै तां वृत्ति देशमैंही अंतःकरण उपहित शुद्ध चेतन है यांते वृत्ति अवछिन्न

चेतन औ विषयावच्छिन्न चेतनका अभेद होनेतैं वह वृत्ति अपरोक्ष है तांवृत्ति के विषय शुद्ध चेतनमैं ब्रह्मता वी है परंतु ब्रह्माकार वृत्ति हुई नहीं अवांतर वाक्यसैं वृत्ति हुई है॥ और सत्यं ज्ञान मनंतं ब्रह्म इसरीतीके अवांतर वाक्य हैं॥ तत्वमसि। इसरीतिके महावाक्य हैं॥ संशयरूप भ्रम दो प्रकारका है एक प्रमाण संशय है औ प्रमेय संशय है। प्रमाण गोचर संदेह प्रमाण संशय कहिये है ताहीकूं प्रमाणगत असंभावना कहे हैं वेदांत वाक्य अद्वितीय ब्रह्म विषे प्रमाण हैं वा नहीं हैं यह प्रमाण संशय है। प्रमेय संशयवी आत्म संशय औ अनात्म संशय भेदतैं दो प्रकारका है। अनात्म संशय अनंतविध हैं तांके कहनेमैं उपयोग नहीं॥ आत्म संशयवी अनेक प्रकारका है। आत्मा ब्रह्मसैं भिन्न है अथवा अभिन्न है। अभिन्न होवे तौ वी सर्वदा अभिन्न है अथवा मोक्ष कालमैं ही अभिन्न होवै है। सर्वदा अभिन्न नहीं सर्वदा अभिन्न होवे तौ वी आनंदादिक ऐश्वर्यवान् है अथवा आनंदादिक रहित है। आनंदादिक ऐश्वर्यवान् होवे तौ वी आनंदादिक गुण हैं। अथवा ब्रह्मात्माका स्वरूप है॥ इसतें आदि लेके तत्पदार्थाभिन्न त्वंपदार्थ विषे अनेक प्रकारका संशय है॥ तैसे केवल त्वंपदार्थ गोचर संशयवी आत्मगोचर संशय हैं। आत्मा देहादिकन तैं भिन्न है वा नहीं। भिन्न कहैं तौवी अणुरूप है वा मध्यम परिमाण रूप है। वा विभु परिमाण है। जो विभु कहैं तौ वी कर्ता है अथ-

वा अकर्ता है॥ अकर्ता कहें तौ वी परस्पर भिन्न अनेक हैं अथवा एक है। इस रीतिके अनेक संशय केवल त्वंपदार्थ गोचर हैं॥ तैसे केवल तत्पदार्थ गोचर बी अनेक प्रकारके संशय हैं। वैकुंठादि लोक-विशेष वासी ईश्वर परिच्छिन्न हस्त पादादिक अवयव सहित शरीर है। अथवा शरीर रहित विभु है। जो शरीर रहित विभु कहें। तौ वी परमाणु आदिक सापेक्ष जगत्का कर्ता है। अथवा निरपेक्ष कर्ता है। परमाणु आदिक निरपेक्ष कर्ता कहें तौ वी केवल कर्ता है। अथवा अभिन्न निमित्तोपादान कर्ता है। जो अभिन्न निमित्तोपादान कहें। तौ वी प्राणिकर्म निरपेक्ष कर्ता होनेतें। विषमकारितादिक दोषवाला है। अथवा प्राणिकर्म सापेक्ष कर्ता होनेतें विषमकारितादिक दोष रहित हैं। सो सकल संशय प्रमेय संशय कहिये हैं। तिनकी निवृत्ति मनन सें। होवैहै॥ प्रमाताके बाधबिना जांका बाध नहीं होवै सो अबाधित कहियेहैं॥ प्रमाताके होनेतें जांका बाध होवै सो बाधित कहिये हैं॥ अन्य सें असाधारण लक्षण कथनतें भाष्यकारका अन्याभिमत भ्रमके स्वरूपमें अस्वरस है। अर्थ यह दूसरे आंने जो भ्रमका रूप मान्या है। अच्छा नहीं॥ अधिष्ठान-सें विषमसत्तावाला अवभास अध्यास कहियेहैं॥ जहां शुक्तिमें रजत भ्रम होवै तहां शुक्तिदेशमें रजत उपजे है। तांका ज्ञान औ तात्कालिकरजत इन दोनूं कूं सिद्धांत में अवभास औ अध्यास कहे हैं॥ अ

न्य शास्त्रन में रजतकी उत्पत्ति मानैं नहीं यह सर्व सैं विलक्षण ताहै॥ अवच्छेदकता संबंध सें शुक्तिकूं रजतका अधिष्ठान कहैं तौ शुक्तिकी व्यावहारिक सत्ता है। रजतकी प्रातिभासिक सत्ता है। यांते वी अधिष्ठान सैं विषम सत्ता है॥ एकतो स्वरूपाध्यास होवै है॥ दूसरा संसर्गाध्यास होवै है॥ संबंधविशिष्ट आत्माका अनात्मामें अध्यास होवै है॥ सत्यस्य सत्यं प्राणा वै सत्यं तेषामेष सत्यमिति॥ प्रतीति काल मैं जांकी सत्ता होवै प्रतीति शून्य कालमें होवै नहिं तांकूं प्रातिभासिक कहे हैं॥ जिस पदार्थका इदमाकार अनुभव जन्य संस्कार सहित अविद्या होवै। तिस पदार्थका इदमाकार अविद्याका परिणाम रूप अध्यास होवै है। स्वप्न के गजादिकन का पूर्व अनुभव इदमाकार ही हुआ है अहमाकारादिक अनुभव हुआ नहीं॥ प्राग्जातं रजतं पश्यामि॥ किंतु रजतमें इदानी जातत्व है। तथापि शुक्तिके प्राक सिद्धत्व धर्मका अनिर्वचनीय संबंध रजतमें उपजै है यह पक्ष समीचीन है॥ और शुक्तिमें काल त्रयमें रजत नहीं इस निश्चयकूं बाध कहे हैं॥ और अनिर्वचनीय वस्तुकी प्रतीतिकूं ज्ञानाध्यास कहे हैं॥ ज्ञानके अनिर्वचनीय विषयकूं अर्थाध्यास कहे हैं॥ और रजतत्व धर्मविशिष्ट रजतका शुक्तिमें अध्यास है यांते धर्मी अध्यासका वी यह उदाहरण है॥ जहां अन्योन्याध्यास होवै तहां आरोपित का स्वरूपसें अध्यास होवै है॥ सत्य वस्तुका धर्म अथवा संबंध अध्यस्त होवै है। आत्म संबंधका अध्यास होने तैं

हिरण्यगर्भ सत्य है तिसकी अपेक्षातैं परमात्मा अधिकसत्य है

आत्माका संसर्ग ध्यास है ॥ ज्ञानस्वरूप आत्मा है अं
तःकरण नहीं ज्ञानका संबंध अंतःकरणमें प्रतीतहो
वैहै। यांते आत्मा के संबंधका अंतःकरणमें अध्या
सहै॥ तैसे घटःस्फुरति। पटःस्फुरति। इसरीतीसें स्फु
रण संबंध सर्व पदार्थनमें प्रतीत होवैहै॥ और स
र्पशरीरकमें अधिष्ठान अधारका भेद कह्याहै।स
विलास अज्ञानका विषय अधिष्ठान कहियेहै।कार्य
कूं विलास कहेहैं सर्पादिक विलाससहित अज्ञानका
विषय रज्जु आदिक विशेषरूप होनेतें सर्पादिकन
का अधिष्ठान रज्जु आदिक विशेषरूपहै॥ अध्या
स्त सें अभिन्न होयकै जांका स्फुरणहोवै सो अधारक
हियेहै॥ और पंचपादिका विवरणकारके मतके
अनुसारी तो यह कहेहैं आवरण विक्षेप भेदसें अ
ज्ञानकी दो शक्ति हैं आवरण शक्ति विशिष्ट अज्ञानां
शका ज्ञानसें विरोधहोनेतें नाश होवैहै। विक्षेपश
क्ति विशिष्ट अज्ञानांशका ज्ञानसें विरोधनहीं। यांते
ज्ञानसें तांका नाशहोवैनहीं यह वार्ता अवश्य अंगी
करणीय है॥ अन्यथा जल प्रतिबिंबित वृक्षके ऊ
र्ध्वभागमें अधोदेशस्थत्व भ्रम होवैहै। तहां वृक्ष
का विशेषरूपतें ज्ञान हुयेवी ऊर्ध्वभागमें अधोदेश
स्थत्व भ्रमकी निवृत्ति होवै नहीं॥ तैसे जीवन्मु
क्त विद्वानकूं ब्रह्मात्माका विशेषरूपतें ज्ञान हुये
वी अंतःकरणादिरूप विक्षेपकी निवृत्ति होवै नहीं
॥ और अयंसर्पः औ इदंरजतं। यह दो ज्ञानहैं इद
माकार प्रमा वृत्तिहै सर्परजतादिक आकारवाली।

भ्रम वृत्ति है। अवच्छेदकता संबंध सें भ्रम वृत्तिका। इदमाकार प्रमावृत्ति अधिष्ठान है॥ अध्यस्तका अभेद संबंध होवैहै। जैसें ब्रह्म औ प्रपंचका। सर्वं मिदं ब्रह्म। इस प्रतीतिका विषय अभेदहै॥ और सादृश्यज्ञानवी समान्यज्ञानरूप धर्मिज्ञान हीहै। शुक्तिमें चाकचिक्यरूप सादृश्यहै रज्जुमें औ सर्पमें भूमिसंबंध दीर्घत्व सादृश्यहै। पुरुषमें औ स्थाणुमें उच्चैस्त्व सादृश्यहै। या प्रकारतैं अधिष्ठान अध्यस्तमें सामान धर्मही सादृश्य पदार्थहैं॥ ताकै ज्ञानकूं सामानज्ञान औ धर्मि ज्ञान कहना संभवहै। स्वसंयुक्त तादात्म्यरूप संबंधहीं सादृश्यज्ञानकी सामग्री है॥ कार्यके अभिमुख अविद्याकी अवस्थाकूं क्षोभ कहे हैं॥ धर्मिज्ञान वादीके मत मैं इदमाकार वृत्तिसें उत्तर काल मैं क्षोभवती अविद्याका परिणाम सर्प रजतादिक होवै हैं औ उत्तरकाल भावि पदार्थ प्रत्यक्षज्ञानका विषय संभवै नहीं यांते इदमाकार वृत्तिका विषय सर्प रजतादिक मिथ्यापदार्थ नहीं किंतु शुक्ति रज्जु आदिक होनेतैं इदमाकार वृत्ति प्रमाहै। सर्प रजतादिकन कूं विषय करनैं वाली अविद्याका परिणामरूप भ्रम वृत्ति होवैहै। इसकारणतैं धर्मिज्ञानवादीके मतमैं भ्रमवृत्ति ऐंद्रियक नहीं होवैहै। साक्षात् इंद्रियके संबंधतैं होवै सो ऐंद्रियक कहियेहैं। भ्रम वृत्तिका अधिष्ठान जोइदमाकार वृत्ति ताकी उतपत्ति द्वारा परंपरातैं इंद्रियसंबंध का भ्रम वृत्तिमैं उपयोगहै साक्षात् नहीं॥ उ-

पाध्यायके मतमैं सर्प रजतादिकन का उपादान। भूत अविद्यामैं क्षोभका निमित्त दोषवल इंद्रियसं योगहै। यांते एकहीं इंद्रिय संयोगतैं अविद्याका। परिणाम सर्प रजतादिक औ तिनकूं विषय करनैं वाली अंतःकरणका परिणाम इदमाकारवृत्ति एककालमैं होवैहै। इसरीत्तिसें उपाध्यायके मत मैं इदमाकार वृत्ति भ्रमरूपता होवैहै। औ साक्षात् इंद्रिय संबंधतैं उपजैहै यांते ऐंद्रियक कहियेहैं। इंद्रिय संबंधसें जो इदमाकार वृत्ति होवै सो स्वकालमैं उत्पन्न सर्प रजतादिकनकूं विषय कर्ती होवैहै। यांते अयंसर्पः। इदंरजतं। इसरीतिसें होवैहै केवल इदं पदार्थ गोचर होवैनहीं।। और सर्प रजतादिक की अधिष्ठानता के अवच्छेदक होने तैं रज्जु शुक्ति आदिक वी सर्प रजतादिकन के अधिष्ठान कहिये हैं।। अन्यत्र अनुभूतकी अन्यत्र प्रतीतिकूं अनुभूयमानारोप कहेहैं जैसे शंखदेशस्थ नेत्रके पित मैं अनुभूत जो पीतिमाका संबंधताकी शंखमैं प्रतीति होवै है।। और जलमैं नीलता अध्यास होवै सो स्मर्यमाणारोप है। स्मृतिके विषयकूं स्मर्यमाण कहेहैं।। अधिष्ठान इंद्रियके संबंधकूं सकल अध्यास मैं कारणता मानै तौ अहंकारादिक अध्यासकी अनुपपत्ति होवैगी काहेतैं अहंकारादिकन का अधिष्ठान ब्रह्म है अथवा साक्षी चेतन है सो नीरूपहैं तासैं ज्ञान हेतु इंद्रियसंबंधका संभवनहीं।। सर्व मतमैं स्वपनाध्यास प्रा-

तिभासिक है तांका अधिष्ठान साक्षी चेतन है तासैं इंद्रिय संबंधके असंभवतैं प्रातिभासिक अध्यासमैंबी अधिष्ठानसैं इंद्रिय संबंधकूं कारणता संभवै नहीं। इसरीतिसैं उपाध्याय मत समीचीन नहीं॥ औ मुख्य सिद्धांत तो यह है जैसे स्वप्न अवस्थामैं सारे पदार्थ साक्षी भास्य हैं। तिनमैं चाक्षुषत्व रासनत्वादिक प्रतीति होवैहै। तिसरीतिसैं सर्प रजतादिक अनिर्वचनीय पदार्थ साक्षी भास्य हैं। तिनमैं चाक्षुषत्वादिक प्रतीति भ्रम है॥ केवल सर्प रजतादिकहीं साक्षीभास्य नहीं हैं। किंतु सारे अनात्म पदार्थ साक्षी भास्य हैं। स्वप्नकी न्यांई घटादिक प्रमेय। औ नेत्रादिक प्रमाण तैसें नेत्रादिकनका घटादिकनसैं संबंध। एककालमैं उपजै हैं। यातें तिनका परस्पर प्रमाण प्रमेय भाव संभवै नहीं। औ प्रतीत होवैहै यातें अनिर्वचनीय हैं॥ अध्यस्त पदार्थाकारहीं अविद्याकी वृत्तिरूप भ्रम ज्ञान होवैहै यह पक्षहीं समीचीन है धर्मिज्ञानवादीके तीन मतमैं॥ औ शुक्तिमैं रजतादि भ्रम होवै तहां सिद्धांत पक्षसैं विना पांच मत हैं। १। सत्ख्याति। २। आत्मख्याति। ३। अन्यथाख्याति। ४। अख्याति। ५। असत्ख्याति। भ्रमके नाम कहे हैं॥ सर्वके मतमैं। पंचनाममैं अन्यतम भ्रमका नाम प्रसिद्ध है। तिनमैं सत्ख्याति वादीका यह सिद्धांत है शुक्तिके अवयवन के साथ रजतके अवयव सदा रहेहैं जैसे शुक्तिके अवयव सत्य हैं तैसेहीं रजतके अवयव हैं मिथ्या नहीं जैसे दोषसहित नेत्रके संबंधतैं सिद्धांतमैं अविद्याका परिणाम अनिर्वचनीय रजत उपजैहै तैसे दोष

सहित रजत अवयवसैं सत्य रजत उपजैहै। अधि-
ष्ठान ज्ञानतैं जैसे अनिर्वचनीयरजतकी निवृत्ति सि-
द्धांतमैं होवैहै। तैसे शुक्ति ज्ञानतैं सत्य रजतका अ-
पनैं अवयवनमैं ध्वंसहोवैहै॥ या पक्षमैं यह दोष
है शुक्ति ज्ञानसैं अनंतर। कालत्रयेपि शुक्तौ रजतं-
नास्ति। इसरीतिसैं शुक्तिमैं त्रैकालिक रजताभाव
प्रतीत होवैहै॥ असतख्याति वादिदोहैं एकतौ शू-
न्यवादि नास्तिकहै तिसकेमतमैं सारे पदार्थ अस-
त्यरूप हैं॥ यामतका खंडन शारीरकके द्वितीयाध्या-
यके तर्कपादमैं विस्तारसैं कह्याहै औ अनुभव विरु-
द्ध है काहेतैं शून्यवादमैं सर्वस्थानमैं शून्यहै यातै
किसीका व्यवहार सिद्ध नहीं हुआ चाहिये। औ शून्य-
सैं व्यवहार होवै वा अग्निका प्रयोजन जलसैं जल-
का प्रयोजन अग्निसैंहुआ चाहिये। अग्निजलतो
सत्य वा मिथ्या कहूं है नहीं। केवल शून्य तत्त्व है सो
सारे एक रसहै तासैं कोई विशेष नहीं॥ औ आत्म-
ख्याति वाद असंगतहै। विज्ञानसैं भिन्नरजतहै सो
ज्ञानका विषय है। ताकूं विज्ञानरूप आत्मासैं अभि-
न्नकथन संभवै नहीं औ विज्ञानवादीके मतमैं सा-
रे पदार्थ क्षणिक विज्ञानरूप हैं तामैंप्रत्यभिज्ञाऽ-
संभवादिक अनंत दूषण हैं॥ अन्यरूपतैं प्रतीति
कूं अन्यथाख्याति कहेहैं। शुक्ति पदार्थमैं शुक्तित्व
धर्महै रजतत्व नहीं औ शुक्तिकी रजतत्वरूपतैं
प्रतीति होवैहै औरस्वप्नकूं नैयायिक मानस विपर्य-
य कहैहैं। अन्यथाख्यातिकूं विपर्यय कहेहैं। औ

श्रुति मैं स्वप्न पदार्थकी उत्पत्ति कही है। नतत्र रथा नरथयोगा नपंथानो भवंत्यथ रथान रथयोगान्प थः सृजते। यह श्रुति है तानैं व्यावहारिक रथ अ श्व मार्गनका स्वप्न मैं निषेध करिके अनिर्वचनी य रथ अश्व मार्गकी उत्पत्ति कही है। तैसे संध्ये सृष्टिराह हि॥ यह व्यास सूत्र है तानैंवी स्वप्नमैं अ निर्वचनीय पदार्थन की सृष्टि कही है। व्यासकृत सूत्र स्मृतिरूप है इसरीतिसैं नैयायिकन का अन्य थाख्याति वाद श्रुति स्मृति विरुद्ध है। अन्यथाख्या ति का खंडन अनेक ग्रंथन मैं है। यामैं यह दोष है जो देशांतरमैं स्थित रजत सैं नेत्रका संबंध होवै तो हट्ट मैं रजतके सन्निहित धरे अन्य पदार्थनका प्रत्यक्षवी हुआ चाहिये। कांता कर स्थ रजतका प्र त्यक्ष होवै तौ तब कांता के करका वी प्रत्यक्ष हुआ चाहिये और नेत्र सैं व्यवहित रजतत्वका शुक्ति मैं ज्ञान संभवै नहीं। जो शुक्तिके समीप रजत होवै तो दोनूं सैं नेत्रका संयोग होयके रजत वृत्ति रजतत्व की शुक्ति मैं नेत्रजन्य भ्रम प्रतीति संभवै काहे तैं विशेषण विशेष्यतैं इंद्रियका व्यासंग हुये इंद्रिय जन्य विशिष्ट ज्ञान होवै है। जहां सत्य रजत है तहां रजतत्व सैं नेत्र का संयुक्तसमवायसंबंध संभवै है। औ जो नैयायिक कहैं प्रत्यक्ष ज्ञान का हेतु विषय इंद्रियका संबंध दो प्रकारका है। एक लौकिक संबं ध है औ अलौकिक संबंध है। संयोग आदि षट् प्रका रका संबंधलौकिक कहिये हैं। लौकिक संबंध के।

उदाहरण औ स्वरूप प्रत्यक्ष निरूपणमैं कहेहैं। संयुक्त। संयुक्तसमवाय। संयुक्त समवेतसमवाय। समवाय। समवेतसमवाय। विशेषविशेषणभाव इति ६ और ज्ञान लक्षण। सामान्यलक्षण। योग जन्य धर्म लक्षण। यह तीन प्रकार का अलौकिक संबंध है॥ स्व संयुक्त मनः संयुक्तात्म समवेत ज्ञान। अथवा। संस्कार। चंदनके सुगंध मैं है। काहेतैं स्व शब्द सैं नेत्र का ग्रहण है। तासैं संयुक्त कहिये संयोगवाला मन है। तासैं संयुक्त कहिये संयोग वाला आत्मा है। तामैं समवेत कहिये समवाय संबंध सैं वृत्ति सुगंधकी स्मृति है। सुगंधका संस्कारबी समवाय संबंध सैं आत्मवृत्ति है। इस परंपरा संबंधका प्रतियोगी नेत्र है। अनुयोगी सुगंधहै। जामैं संबंध रहे सो संबंध का अनुयोगी कहिये है यह ज्ञान लक्षण संबंधहै॥ और स्व जन्य ज्ञान प्रकारीभूत घटत्व वत्ता संबंधहै। नेत्र जन्य एक घटका ज्ञान हुये। स्व कहिये नेत्र। तिसतैं जन्य अयंघटः। यह ज्ञान है। तामैं प्रकारीभूत कहिये। विशेषण जो घटत्व। तद्वत्ता कहिये ताकी आधारता सकल घटन मैं है। औ सामान कहिये जाति। लक्षण कहिये स्वरूप। यांते जाति स्वरूप संबंध है॥ औ जांकूं एक घट का नेत्र जन्य ज्ञान होवै तांकूं यह पूछै। हैं कितने घटनका चाक्षुष साक्षात्कार तेरे कूं हुआ है। तब प्रश्न कर्त्ता कूं द्रष्टा यह कहे है मेरे नेत्रके। अभिमुख एक घट है कितने घटनका साक्षात्कार हुआ यह तेरा प्रश्न अविवेक सैं है॥ और गंधके उत्क

र्ष अपकर्षतो नासिकासें आघ्रात करे तब ज्ञान होवेहै। नेत्रमें तो श्वेत चंदन का ज्ञान होवैहै औ नेत्र इंद्रिय सें सुगंध का ज्ञान होवे तौ गंध के उत्कर्ष अपकर्षका ज्ञान हुआ चाहिये। यांते चंदन मैं सुगंध का ज्ञान अनुमितिरूपहै। प्रत्यक्ष नहीं॥ और। जगदीसभट्टाचार्य का यह मतहै। योगी कूं व्यवहित का। औ भूत भावी का। इंद्रिय जन्य साक्षात् कार होवे है। योगीसें इतरकूं वर्तमान इंद्रिय संबंधी काहीं साक्षात् कार होवैहै। औ जां इंद्रियके योग्य। जो पदार्थ नहीं तिस इंद्रियतैं तां पदार्थ का साक्षात्कार योगीकूं वी होवे नहीं। जैसे रूप का ज्ञान नेत्र सें ही होवै है रसनादिकन सैं होवे नहीं॥ और कितने ग्रंथ कारनका यह मत है। योगकी अद्भुत महिमाहै अभ्यासके उत्कर्ष अपकर्षतैं योगज धर्म विलक्षण होवैहै। किसीमें तो अभ्यासके उत्कर्षतैं ऐसा धर्म होवै है एक इंद्रिय तें योग्य अयोग्य सकल का ज्ञान होवैहै। किसी मैं अभ्यासके अपकर्षतें योग्य विषयके ज्ञानकी ही सामर्थ्य होवैहै। सर्व प्रकार सें योगज धर्मसें व्यवहितका ज्ञान होवैहै। यांते योगज धर्मवी अलौकिक संबंध है॥ और बहुत क्याकहैं जहां प्रमाज्ञान कहे हैं तहांवी अद्वैत सिद्धांत मैं विषय औ ज्ञान अनिर्वचनीयहैं॥ औ कितने स्थानमैं अन्यथाख्याति लिखी है। तांका यह तात्पर्यहै जहां अधिष्ठान आरोप्यका संबंध होवे। औ परोक्षभ्रम होवै। तहां अन्यथाख्यातिवी संभवैहै। परंतु सारे अन्य-

थाख्याति संभवै नहीं॥ जहां अरोप्य व्यवहित हुयां अपरोक्ष भ्रम होवै तहां अनिर्वचनीयख्याति आवश्यक है और जहां आत्मसत्ताकी अनात्ममैं अन्यथाख्याति कही तहां बी आत्मसत्ताका अनिर्वचनीय संबंध उपजे है। इस रीतिसें जहां अनिर्वचनीय संबंधीकी उत्पत्ति नहीं संभवै। तहां अनिर्वचनीय संबंधका अंगीकार है॥ तैसे परोक्ष भ्रम होवै तहां बी अनिर्वचनीय विषयकी उत्पत्ति ब्रह्मविद्याभरणमैं लिखी है॥ परंतु परोक्ष भ्रम होवै तहां अन्यथाख्याति मानैं तौ बी दोष नहीं॥ ब्रह्मविद्या भरणकी सुगम रीति सें अन्यथाख्याति वादकी हेयता प्रतिपादन करी॥ और तैसे अख्याति वाद बी असंगत है। प्रभाकरका अख्याति वाद है यह ताका तात्पर्य है अयथार्थ ज्ञान अप्रसिद्ध है। सारे ज्ञान यथार्थही होवै हैं। जो अयथार्थज्ञान बी होवै तौ पुरुषकूं ज्ञान होतेहीं ज्ञानत्व सामान धर्म देखके उत्पन्न हुये ज्ञानमैं अयथार्थका संदेह होय के प्रवृत्ति निवृत्तिका अभाव होवैगा। इदं रजतं। अयं सर्पः। इत्यादिक स्थलमैं दो ज्ञान हैं तहां शुक्तिका रज्जुका सामान इदंरूप प्रत्यक्षज्ञान यथार्थ है। औ रजतका तथा सर्पका स्मृतिज्ञान बी यथार्थ है। यद्यपि विशेष शुक्ति रज्जु भागकूं त्यागके प्रत्यक्ष ज्ञान हुआ है। औ तत्ता भाग रहित स्मृतिज्ञान हुआ है। तथापि एक भाग त्यागने सें ज्ञान अयथार्थ होवै नहीं। किंतु अन्यरूपतें ज्ञानकूं अयथार्थ कहे हैं इस रीतिसें भ्रमज्ञान

अप्रसिद्ध है। और जो शास्त्रांतर वाले ऐसे कहैं जां पदार्थमें इष्टसाधनता ज्ञानहोवे तामें प्रवृत्ति होवे है। औ जामें अनिष्ट साधनता ज्ञान होवे तासें निवृत्ति होवेहै। अख्याति वादिके मतमें शुक्तिमें इष्टसाधनता ज्ञानकहैं तौ भ्रमका अंगीकार होवे है। यांते इष्टसाधनता ज्ञानके अभावतें शुक्तिमें रजतार्थीकी प्रवृत्ति नहीं हुई चाहिये। तैसें रज्जुमें अनिष्टसाधनत्व है नहीं तांका ज्ञान मानें तौ भ्रमका अंगीकार होवै। यांते अनिष्ट साधनता ज्ञानके अभावतें निवृत्ति नहीं हुई चाहीये। यांते भ्रमज्ञानअवश्य कहै॥ तांका इसरीतिसें अख्यातिवादी समाधान करैहैं। जां पदार्थमें पुरुषकी प्रवृत्ति होवै तां पदार्थका सामान्यरूपतें प्रत्यक्षज्ञान। औ इष्ट पदार्थकी स्मृति। औ स्मृतिके विषयतें पुरोवर्ति पदार्थका भेदज्ञानाऽभाव। तैसें स्मृतिज्ञानका पुरोवर्ति ज्ञानतें भेदज्ञानाऽभाव। इतनी सामग्री प्रवृत्तिकी हेतुहै भ्रमज्ञान बिना प्रवृत्ति संभवैहै। ज्ञान द्वयका विवेकाऽभाव औ उभय विषयका विवेकाऽभाव अख्याति पदका पारिभाषिक अर्थहै॥ यह मतबी समीचीन नहीं। काहेतें शुक्तिमें रजत भ्रमतें प्रवृत्तिहुये पुरुषकूं रजतका लाभ नहीं होवे तब पुरुष यह कहैहै। रजतशून्य देशमें रजत ज्ञानसें मेरी निष्फल प्रवृत्ति हुई। इसरीतिसें भ्रमज्ञान अनुभव सिद्ध है तांका लोप संभवै नहीं। और मरुभूमिमें जलका बाधहोवै तब यह कहे है मरुभूमिमें मिथ्याजलकी प्रतीति

मेरेकूं हुई या बाधतें वी मिथ्याजल औ तांकी प्रतीति होवै है। अख्याति वादीकी रीति सें तो रजतकी स्मृति औ शुक्ति ज्ञानके भेदाऽग्रहतें मेरी शुक्तिमें प्रवृत्ति हुई ऐसा बाध हुआ चाहिये। औ मरुभूमिके प्रत्यक्षसें औ जलकी स्मृति सें मेरी प्रवृत्ति हुई ऐसा बाध हुआ चाहिये। औ विषय तथा भ्रमज्ञान दोनूंकूं त्यागकै। अनेक प्रकारकी विरुद्ध कल्पना अख्यातिवादमें है। तथाहि नेत्र संयोग हुये दोषके माहात्मते शुक्तिका। विशेषरूपतें ज्ञान होवै नहीं यह कल्पना विरुद्ध है। तैसे तत्ता अंशके प्रमोषतें स्मृति कल्पना विरुद्ध है। औ विषयका भेद है औ भासै नहीं। तैसे ज्ञानोका भेद है कदीबी भासैनहीं यह कल्पनावी विरुद्ध है। औ रजतकी प्रतीति कालमें अभिमुख देशमें रजत प्रतीति होवै है यांते अख्यातिवाद अनुभव विरुद्ध है॥ और अनुभवत्व स्मृतित्व ज्ञानत्वके व्याप्य हैं। परस्पर विरोधी हैं। तैसे प्रमात्व धर्मवी अनुभवत्वका व्याप्य है। काहेतें। अनुभवत्वतो यथार्थानुभव औ अयथार्थाऽनुभवमें रहे है। औ प्रमात्व धर्म यथार्थानुभवमें रहे है तैसे यथार्थत्वकावी प्रमात्व व्याप्य है काहेतें यथार्थत्वतो सत्य पदार्थकी स्मृतिमेंवी रहेहै। औ स्मृतिमें प्रमात्व रहे नहीं यह शास्त्रन की परिभाषा है। यांके अनुसार प्रमाका। स्मृतिसें भिन्न अबाधित अर्थगोचर ज्ञान प्रमा कहियेहै। यह लक्षण कह्याहै॥ औ न्याय शास्त्रके मत में ज्ञानकी उत्पादक सामग्री सें प्रमात्वकी उत्पत्ति होवै नहीं। औ ज्ञान की ज्ञा

अप्रसिद्धकरिबाधित

पैक सामग्रीसें प्रमात्वका ज्ञान होवै नहीं। याकूं परतःप्रमाण्यवाद कहेहैं॥ या प्रसंगमैं प्रमात्वका नाम प्रमाण्य है। परतः कहीये अन्यतें प्रमाण की उत्पत्ति होवैहै। अन्यतें प्रमाण्यका ज्ञान होवैहै। ज्ञान सामग्रीतैं भिन सामग्री पर शब्दका अर्थहै॥ ज्ञानकी सामग्री इंद्रिय अनुमानादिक पूर्व कहीहै। तासें प्रमात्वकी उत्पत्ति होवै तौ सकल ज्ञान प्रमाहुये चाहिये अप्रमाज्ञान का लोप होवैगा यांते जहां गुण सहित इंद्रिय अनुमानादिकन तैं ज्ञान होवै तहां प्रमा होवैहै। प्रत्यक्ष प्रमाकी उत्पत्तिमैं विषयके अधिक देशमैं इंद्रियका संयोग गुणहै॥ औ साध्यव्याप्य हेतुका साध्यवत्पक्षमैं ज्ञान। अनुमिति प्रमाकी उत्पत्तिमैं। गुणहै॥ और व्यवसाय ज्ञानकूं औ तांके विषय घटकूं तैसे विवसायके आश्रय आत्माकूं। घट महं जानामि। यह ज्ञान प्रकाशैहै। इसीवास्ते त्रिपुटी गोचर। ज्ञानकूं अनुव्यवसाय कहेहैं॥ जैसे घट ज्ञान आत्मा विषय हैं। तैसे घटत्व ज्ञानत्व आत्मत्वबी घट ज्ञानके ज्ञानके विषयहैं। घटज्ञान सें तो स्व संयुक्तसमवाय संबंधहै। औ ज्ञानत्वसैं स्व संयुक्त समवेत समवाय संबंधहै। अनुव्यवसाय ज्ञान का करण मन है यांते सकल विषयतें मनका संबंध कह्या चाहिये। स्व शब्दका अर्थ मनहै॥ औ घट ज्ञान महं जानामि। यह द्वितीय अनुव्यवसायका स्वरूपहै॥ द्वितीय अनुव्यवसाय का व्यवहार इष्ट होवै तो। घटज्ञानस्य ज्ञानमहं जानामि। ऐसा तृतीय अनुव्यवसाय होवै

है॥ औ जो जो ज्ञान ग्राहक सामग्री तिन सर्वतें प्रमात्व ग्रह होवै याकूं स्वतःप्रामाण्य ग्रह कहे हैं। या पक्षमैं प्रमात्व धर्मकूं त्यागके किसी ज्ञानका ज्ञान होवै नहीं। प्रमात्व ज्ञानत्व यह उभय धर्म विशिष्ट ज्ञानका ज्ञान होवैहै केवल ज्ञानत्वधर्म विशिष्ट ज्ञानका ज्ञान होवै नहीं॥ औ मीमांसक मतमैं औ सिद्धांत मतमैं स्वतः प्रमाण्य ग्रह का अंगीकार है॥ न्याय वैशेषिक मतमैं परतःप्रमाण्य ग्रहका अंगीकारहै॥ औ सिद्धांत पक्षमैं तो प्रकाशरूप ज्ञानहै प्रकाश पदार्थ का ज्ञानपदार्थसैं भेद नहीं॥ औ प्रभाकरके मतमैं ज्ञानके विषयमैं प्रकाश होवैहै प्रकाशका हेतु ज्ञानहै जैसे घटज्ञान होवै तब घट ज्ञानतें घटका प्रकाशहोवैहै। तैसे घटकाज्ञान अपनैं स्वरूपका प्रकाशकरैहै। अपना आश्रय जो आत्मा ताका प्रकाश करैहै॥ सारेज्ञान त्रिपुटीकूं प्रकाशैहैं ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय त्रिपुटी कहियेहैं॥ मुरारि मिश्र के मतमैं ज्ञानका प्रकाश अनुव्यवसायतें होवैहै औ तिसज्ञानका प्रकाशक अनुमितिही प्रमात्वका प्रकाश मान्याहै यातें अनुव्यवसायसें उत्तर प्रमात्वका संदेह नहीं हुआ चाहिये और। अयंघटः। व्यवसायज्ञानहै और अनुव्यवसायज्ञानतें ज्ञानका प्रकाश होवैहै यह कथन असंगतहै। काहेतें जो अप्रकाश स्वभाव ज्ञान होवै तो। ताके संबंधतें घटादिकनका प्रकाश नहीं होवैगा। औ अनुभवसें वी ज्ञानकूं स्व प्रकाशता सिद्ध होवैहै। जहां दुर्बोध अज्ञात पदार्थका पुरुषकूं ज्ञान होय॰

के। ज्ञातव्यं ज्ञातं नावशिष्यते ज्ञातुं। ऐसा वाक्य हर्ष सें कहै। ताकूं अन्य पुरुष कहैं। एतज्ज्ञानं ज्ञातुमवशिष्यते। इस वाक्यकूं सुनके हास्य करैहै यांते ज्ञानका प्रकाश तांके अनुभवसिद्धहै ज्ञान के प्रकाश की अवशेषता सुनके हसैहै औ घटं ज्ञानं ज्ञातं नवा। इस वाक्यके वक्ताकूं निर्बुद्धी कहैहै यांते कदाचितवी ज्ञान मैं अज्ञातता नहीं यांते प्रकाशस्वभाव ज्ञान है॥ औ किसी पुरुषकूं ऐसा संदेह होवै नहीं मेरेकूं घटका ज्ञान हूआ है अथवा नहीं हूआ जो घटका ज्ञान अज्ञात होवै तो कदाचित् संदेहवी हुआ चाहिये यांते ज्ञान अज्ञात होवै नहीं॥ ज्ञानका प्रकाश अनुव्यवसाय होवैहै यह कथन असंगतहै॥ वृत्तिके प्रसिद्ध भेद कहे औ अवांतर भेद अनन्तहैं॥ इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य यतिवर्य्य श्रीस्वामीराम गिरि शिष्येण काशीवासिना अनंतानंदगिरिणा विरचिते वृत्तिप्रभाकरसारसंग्रहे वृत्तिभेदनिरूपण प्रसङ्ग प्राप्त सत्ख्यात्यादि निराकरणागत ख्याति निराकरण प्रयोजक स्वतःप्रमात्व प्रमाण निरूपणंनाम सप्तमः प्रकाशः॥७॥ शिव॥ श्रीकाशीविश्वनाथ प्रसन्नोऽस्तु॥ श्रीशिवोजयति॥ ॐ॥ ॐ॥

श्रीगणेशायनमः॥

अथजीवेश्वरस्वरूपवृत्तिप्रयोजनसहितकल्पितनिवृत्तिस्वरूपनिरूपणं। नाम अष्टम प्रकाशः प्रारभ्यते॥ ८॥

सप्तम प्रकाशमैं वृत्तिका स्वरूप कह्या वृत्तिका प्रयोजन कहनेकूं अष्टम प्रकाशका आरंभहै। अज्ञान निवृत्ति मुख्य प्रयोजन वृत्तिकाहै। घटादिक अनात्माकार वृत्तिसें घटादिक अवच्छिन्न चेतनस्थ अज्ञानकी निवृत्ति होवैहै। अखंडब्रह्माकार वृत्तिसें निरवच्छिन्न चेतनस्थ अज्ञानकी निवृत्ति होवैहै। वाचस्पतिके मतमें वृत्तिसें नाश्य अज्ञानका आश्रय जीवहै औ विषय ब्रह्महै॥ विवरणकारके मतमैं अज्ञानका आश्रय औ विषय शुद्ध चेतन है। जीवभाव ईशभाव अज्ञान अधीनहै यांते अज्ञान कृत जीव अज्ञानका आश्रय संभवै नहीं॥ नैयायिकादिक ज्ञानाभावकूं ही अज्ञान कहे हैं॥ सिद्धांतमतमैं आवरण विक्षेप शक्ति वाला अनादिभावरूप अज्ञान पदार्थहै। विद्यासें नाश्य होनेतें अविद्या कहेहैं प्रपंचका उपादान होनेतें प्रकृति कहेहैं। दुर्घटकूंबी संपादन करै यांते माया कहेहैं। स्वतंत्रताके अभावतें शक्ति कहेहैं। नैयुक्तिकूं सहारै नहीं अनिर्वचनीय अज्ञानहै। सर्वथा वचनके अगोचरकूं अनिर्वचनीय नहीं कहेहैं। किंतु पारमार्थिक सत्स्वरूप ब्रह्मसें विलक्षण औ सर्वथा सत्ता स्फूर्ति शून्यशशशृंगादिक असत्

सें विलक्षणताही अनिर्वचनीय शब्दका पारिभाषिक अर्थहै। यांतें अनादि भावरूपता कथन संभवेहै॥ और बुद्धीवासना विशिष्ट अज्ञानमैं प्रतिबिंब ईश्वर है सो आनन्दमय कोशहै॥ अंतःकरण अभास जीवहै सो विज्ञानमय कोशहै॥ सुषुप्ति अवस्थामैं जो बुद्धिकी सूक्ष्म अवस्था ताकूं वासना कहेहैं॥ जीवमैं कूटस्थका संबंधाध्यास है। कूटस्थमैं जीवका स्वरूपाध्यासहै॥ विज्ञानमय जीवही सुषुप्तिकालमैं। सूक्ष्मरूप विलीनहूआ आनंदमय कहिये हैं औ चेतन प्रति बिंबगर्भ अज्ञानरूप अव्याकृतही सूक्ष्म सृष्टि कालमैं तांका प्रेरक होवे तब हिरण्यगर्भ संज्ञक होवैहै। स्थूल सृष्टि कालमैं विराट होवैहै॥ मांडूक्य उपनिषत् मैं त्रिविध जीवका त्रिविध ईश्वरतें अभेद चिंतन लिख्याहै। जिस मंदबुद्धि पुरुषकूं महावाक्य विचारतें तत्त्व साक्षात्कार होवे नहीं ताकूं प्रणव चिंतन मांडूक्यमैं कह्याहै। यांते ईश्वरके धर्म सर्वज्ञतादिक प्राज्ञरूप आनंदमयमैं अभेद चिंतनके अर्थ कहे हैं औ अनंदमयकूं ईश्वरता विविक्षासें नहीं कहे। जैसे विश्व विराट्के अभेद चिंतनके अर्थ वैश्वानरके उनीस मुख कहेहैं चतुर्दशत्रिपुटी पंचप्राण यह उनीस विश्वके भोगसाधन होनेतें विश्वका मुखहैं औ वैश्वानर ईश्वरहै ताकूं भोग होवैं नहीं॥ पारमार्थिक व्यावहारिक प्रातिभासिक भेदसें जीव तीन प्रकारका है। स्थूल सूक्ष्म देहद्वय अवच्छिन्नकूटस्थचेतन पारमार्थिक जीव है तिसका

ब्रह्मसें मुख्य अभेदहै। मायासें आवृत कूटस्थमें कल्पित अंतःकरणमें चिदाभासहै सो देहद्वयमें अभिमानकर्ता व्यावहारिक जीव है ब्रह्मज्ञानसें पूर्वताका बाध होवैनहीं यातें व्यावहारिक जीवहै। निद्रारूप। मायासें आवृत व्यावहारिक जीवरूप अधिष्ठानमें। कल्पित प्रातिभासिक जीवहै। ब्रह्मज्ञानसें बिनाही जाग्रतप्रपंचके बोधसें प्रातिभासिक प्रपंचकी निवृत्तिकालमें व्यावहारिक जीवके बोधसें प्रातिभासिकजीवकी निवृत्तिहोवैहै। इसरीतिसें कूटस्थका जीवमें अंतर्भाव हैं। यातें जीव ईश्वर शुद्धचेतन भेदसें त्रिविध चेतनहैं यही पक्षसर्वकूं संमतहै। औ वार्तिकवचनके अनुकूलहै॥ और दोहा ज्यूं अविकृत कौंतेयमें राधापुत्र प्रतीति चिदानंदघन ब्रह्ममें जीवभावतिहं रीति॥ औकल्पित अज्ञानके कल्पितसंबंधसें ब्रह्ममें बिनाहुआ जीवत्व प्रतीति होवैहै॥ जैसे स्वप्नमें एक द्रष्टाकूं नाना पुरुषकी प्रतीति होवै। तिनमेंकिसीको बनमें भ्रमण। किसीको स्वनगरकी प्राप्ति। स्वप्न द्रष्टा कूं नहीं। किंतु। आभासपुरुषनकूं होवैहै॥ तैसे अविद्यासहित ब्रह्मरूप जीवकूं। बंध मोक्षकी प्राप्ति नहीं। किंतु आभासरूप जीवनकूं बंध मोक्ष प्रतीत होवैहैं॥ या पक्षमें किसके ज्ञानतें अविद्याकी निवृत्तिरूप मोक्ष होवैगा यह प्रश्नकरे तो तेरेज्ञानतें होवैगा यह उत्तरहै। अथवा किसीके ज्ञानतें होवै नहीं यह उत्तरहै। काहेतें यामतमें बंधका अत्यंत असदभाव आत्मामेंहै। नित्यमुक्त। आत्माका मोक्षहोवैगा अथवा हुआहै यह कथन संभवै

नहीं। इस अभिप्रायतैं मोक्ष प्रतिपादक वाक्यनकूं अर्थ वाद कहैहैं॥ औ नाना अज्ञान वादमैं जीवाश्रित ब्रह्म विषय एक अज्ञान है। यह वाचस्पतिका मतहै। तहां जीवके अज्ञानतैं कल्पितईश्वर औ प्रपंच नाना मानै हैं। तथापि जीवके अज्ञान सैं कल्पितईश्वरबी सर्वज्ञ ही मानेहैं। ईश्वरमैं आवरणका अंगीकार नहीं॥ औ विवरणकारके मतमैं दर्पणादिक उपाधिसैं प्रतिहत नेत्रकी रश्मि ग्रीवास्थ मुखकूं विषय करैहैं। प्रतिबिंब का स्वरूपतौ बिंबसैं भिन्न नहीं। परंतु दर्पणस्थत्व विपरीतदेशाभिमुखत्व बिंबभिनत्व धर्मनकी उत्पत्ति ग्रीवास्थमुखमैं होवैहै। सोबी तीनूं धर्म अनिर्बचनीयहैं। तिनका अधिष्ठान रूप उपादानकारण ग्रीवास्थ मुख है। सनिहित दर्पणादिक निमितकारणहैं॥ इसरीतिसैं चेतनके प्रतिबिंबवादमैं दो मतहैं। विवरणकारके मत मैं प्रतिबिंबका बिंबसैं अभेद होनेतैं प्रति बिंबका स्वरूप सत्यहै। औ विद्यारण्यस्वामी आदिकनके मतमैं दर्पण आदिकनमैं अनिर्वचनीय मुखाभासकी उत्पत्ति होवैहै याकूं ही आभासवाद कहैहैं॥ विवरण उक्तपक्षकूं प्रतिबिंबवाद कहैहैं॥ और उपादान रूपसैं कार्य की स्थितिकूंही सूक्ष्मावस्था कहैहैं॥ और अधिष्ठान मात्रका शेषबाधका लक्षण नहीं जो बाधका येही लक्षण होवैतौ स्फटिकमै लोहित्य भ्रमादिक सोपाधिक अध्यासहोवै तहां अधिष्ठान ज्ञान सैं उत्तरकालमैंबी। जपाकुसुम औ स्फटिकका परस्पर संबंधरूप प्रतिबंधक होते लौहित्यअध्यासकी निवृत्ति होवैनहीं। तैसे

विद्वानकूं प्रारब्धरूप प्रतिबंधकहोते शरीरादिकन की निवृत्ति होवैनहीं औ स्वेत स्फटिक के साक्षात्कार सें लौहित्य अध्यासका बाधहोवैहै। ब्रह्मसाक्षात्कार तें जीवनमुक्त विद्वान्कूं संसारका बाध होवैहै। इसरीतिसें विक्षेपसहित अधिष्ठानमैं बाधव्यवहार सकल ग्रंथकारोंनें लिख्याहै। तहां अध्यस्त पदार्थमैं मिथ्यात्व निश्चय। वा तांका अभाव निश्चय ही। बाधका स्वरूप संभवैहै॥ औ उपादानके नाशतें भावकार्यका नाश होवैहै॥ अज्ञान निवृत्तिद्वारा अध्यासकी निवृत्ति कहना अवस्थाऽज्ञान वादीकूंबी संभवै नहीं। किंतु ज्ञानतें साक्षात् अध्यासकी निवृत्ति कहना ही संभवैहै। काहेतें शुक्तिज्ञानतें रज्जुके अज्ञानका नाश नहीं होवैहै। यांतें ज्ञानतें अज्ञान मात्रका नाश नहीं होवैहै। किंतु समान विषयक अज्ञानका ज्ञानतें नाश होवैहै॥ ज्ञानतें जांका प्रकाश होवै सो ज्ञान विषय कहियेहै। अज्ञानसें आवृत्तहोवै सो अज्ञानका विषयकहियेहै॥ औ सूक्ष्म विचार करैं तो अवस्थाऽज्ञानकूं उक्त अध्यासकी हेतुता मानेही पंचपादका वचनसें विरोधहै॥ मूलाऽज्ञानकूं हेतुतामाने विरोध नहीं। तथाहि ज्ञानसें केवल अज्ञानकी निवृत्ति होवैहै। अज्ञानरूप उपादानकी निवृत्तिसें अज्ञानके कार्यकी निवृत्ति होवैहै। इसरीतिसें पंचपादिका वचनहै तांका यह अभिप्रायनहीं। काहेतें उपादानके नाशविना भावकार्यका नाश होवै नहीं तौ भावकार्य अणुकहै तांके उपादान परमाणुहैं तिनकूं नित्यता होनेतें नाशसंभवैनहीं। यां

ते परमाणुसंयोगके नाशतें द्व्यणुकका नाश होवैहै। तहां भाव कार्यके नाशमें उपादान नाशकी हेतुताका व्यभिचारहै॥ और विरोधीविषय ज्ञानकूं विरोधी होनेतें मुख दर्पणादिकनके ज्ञानकूं अध्यासकी निवर्तकताहै॥ अज्ञानलक्षण निद्रामैं होनेतें अज्ञानकी अवस्थाविशेषनिद्राहै। परंतु अवस्थाऽज्ञान सादीहै। काहेतें मूलाऽज्ञानही आगंतुक आकार विशिष्ट हुआ। किंचित् उपाधि अवच्छिन्नचेतनका आवरण करै ताकूं अवस्थाऽज्ञान औतुलाऽज्ञान कहेहैं। ताकी उत्पत्तिमैं निमितकारण जाग्रद्भोगहेतु कर्मनका उपरमहै। औमूलाऽज्ञानकाही अकारविशेष होनेतें मूलाज्ञान उपादानकारणहै॥ निद्रारूप अवस्थाऽज्ञानसें आवृत्त व्यवहारिक दृष्टामैं। प्रातिभासिकदृष्टा। अध्यस्तहै। तिसनिद्रासें आवृत्त व्यवहारिकदृश्यमैं। प्रातिभासिकदृश्य अध्यस्त है॥ औ अविद्यामैं प्रतिबिंबरूप जीवचेतनकूं अधिष्ठानता कहनाही समीचीनहै। काहेतें अपरोक्ष अधिष्ठान मैं अपरोक्ष अध्यास होवैहै॥ संक्षेपशारीरकमैं सर्वज्ञात्ममुनिने स्वतःअपरोक्षमैं स्वप्नाध्यास कह्याहै। यांते जीवचेतनही स्वप्नका अधिष्ठानहै॥ औस्वयंज्योतिर्ब्राह्मण वाक्यमैंवी। अत्रायं पुरुषःस्वयंज्योतिर्भवति॥ औ दृष्टिसृष्टिवादमैं तो किसी अनात्म पदार्थकी अज्ञातसत्ता नहीं किंतु ज्ञातसत्ताहै। यांते रज्जु सर्पकी न्याई सकल अनात्मवस्तु। साक्षिभास्यहैं। तिनमैं इंद्रिय जन्य ज्ञानकी विषयता प्रतीत होवैहै सो अध्यस्तहै। सिद्धांतमुक्तावली आदि ग्रं

स्वप्नअधिष्ठानजीवचेतन

स्वप्न

थनमैं तो यह कह्याहै दृष्टिकहिये ज्ञान स्वरूपही सृ
ष्टिहै ज्ञानतैं प्रथक सृष्टिनहीं॥ आकरग्रंथनमैं क
ह्याहै दृष्टिज्ञानसमैं अनात्मपदार्थकी सृष्टिहै ज्ञान
तें पूर्व अनात्मपदार्थ होवैं नहीं॥ औ स्थूलदर्शी पुरु
षनके अनुसारतें सृष्टिदृष्टिवाद मान्याहै सृष्टिसैं
उत्तर दृष्टि होवैहै यह अर्थहै या पक्षमैं अनात्मप
दार्थकीवी अज्ञातसत्ताहै॥ कोई आचार्य इसरीतिसें
सत्वका प्रतिक्षेप कहेहैं। श्रुति सत्यस्यसत्यं प्राणावै
सत्यं तेषामेष सत्यं। अनात्म सत्यतासें आत्मसत्य
ता उत्कृष्टहै। हिरण्यगर्भसत्यहै तांकी अपेक्षातें प
रमात्मा उत्कृष्टसत्यहै। जैसे अन्यराजाकी अपेक्षा
तें उत्कृष्टराजाकूं राजराज कहेहैं॥ औ सन्घटः स
न्पटः एकाकार प्रतीतिका गोचर सकलपदार्थन
मैं अनुगतधर्म जातिरूप सत्यहै॥ इहघटोस्ति। इ
दानींघटोस्ति। इसरीतिसें देशसंबंधकूं औ कालसंबं
धकूं घटादिगोचर प्रतीति विषय करैहै। सो देशसंबं
धरूप वा कालसंबंधरूपही घटादिकनमैं सत्यहै॥
तमेतंवेदानुवचनेनब्राह्मणा विविदिषंति यज्ञेन दा
नेन तपसाऽनाशकेनेतिश्रुतेः। जैसे अश्वेनजिगमि
षति। औ शस्त्रेणजिघांसति। इच्छाकेविषय ज्ञानकी
साधनतामैं श्रुति का तात्पर्यहै। कर्मनकूं इच्छाकी सा
धनतामें श्रुति का तात्पर्यनहीं॥ यज्ञेनविविदिषंति।
केवलशाखामैं कह्याहै तहां नित्यकाम्यसाधारण य
ज्ञशब्दहै। धर्मेणपापमनुदति। शुभकर्मनकूं पापकी
नाशकता प्रतीत होवैहै॥ आसुप्तेरामृतेः कालं नयेद्वे

द्रांतचिंतया। इस गौडपादीयवचनतैं। तच्चिंतनंत त्कथनमन्योन्यंतत्प्रबोधनं इसभगवद्वचनतैं। ब्रह्मसंस्थोऽमृतत्वमेति। इस श्रुति तैं निरंतर क्रियमाण ब्रह्मश्रवणादिकनतैं ज्ञान होवैहै॥ ब्राह्मणः क्षत्रियो वापिवैश्योवा प्रव्रजेद्गृहात्॥ त्रयाणां वर्णानाम् वेदमधीत्य चत्वार आश्रमाः यह वार्तिककार सुरेश्वराचार्यका मतहै॥ श्रावयेच्चतुरोवर्णान् कृत्वाब्राह्मणमग्रतइति॥ तथापि नशूद्रायमतिंदद्यात्।पद्युवैं एतच्छ्मशानंयच्छूद्र इति श्रुतेः॥ भाष्यकारनैंवी प्रथमाध्यायके तृतीयपादमैं उपनयनपूर्वक वेदका अध्ययन कह्याहै औ शूद्रकूं उपनयनके अभावतैं वेदमैंअधिकारनहींहै औ ज्ञानअर्थीत्वात्मकामना का मनुष्यमात्रकूं संभवहोनेतै वेदभिन्न ज्ञानहेतु अध्यात्मग्रंथनके श्रवणमैं शूद्रकावी अधिकारहै॥ रैक्वाचक्नवी आदिक आश्रमरहितमैंवी ब्रह्मविद्या श्रुतिमैं कहिहै॥ तत्वज्ञानतैं कार्यसहित अज्ञानकी निवृत्ति होवै यह अद्वैत ग्रंथनका सिद्धांतहै औ जीव ब्रह्मके अभेदगोचर अंतःकरणकी वृत्तिकूं तत्वज्ञान कहेहैं॥ अंतःकरणकूं अज्ञानकार्यता होनेतें॥ वृत्तिरूप तत्वज्ञानवी अज्ञानकाकार्यहै। कार्य कारणका परस्परअविरोध लोक प्रसिद्धहै। यातै तत्वज्ञानतै अज्ञानकी निवृत्ति कहना संभवै नहीं। समाधान यहहै समानविषयक ज्ञानाऽज्ञानका परस्पर विरोधहै औ पट अग्नि संयोगतैं पटकानाश होवैहै। तहां संयोगका उपादानकारण दो होवै हैं। तथापि अग्निसंयोगका॥

ओ पटका परस्पर नाश्य नाशकभावरूप विरोधहै ॥ और जैसे प्रक्षालित लशुनभांडमें गंधरहे है। तैसे अविद्याके संस्कारकूं अविद्यालेश कहेहैं। अथवा अग्निदग्धपटकी न्यांई स्वकार्यमें असमर्थ ज्ञानबाधित अविद्याकूं अविद्यालेशकहेहैं॥ अद्वैतग्रंथनका मुख्यमत यहहै वाक्यजन्यज्ञानतें अनंतर प्रसंख्यानकी अपेक्षानहीं॥ औ सकल ज्ञानमें सहकारि मनहै। यन्मनसानमनुते श्रुतिहै॥ औ ज्ञानमें अपरोक्षता विषयके अधीनहै यातें अपरोक्षविषयका ज्ञानअपरोक्षही होवैहै औ अपरोक्ष अर्थगोचर ज्ञान होवै सो अपरोक्षज्ञान कहियेहैं॥ प्रमातृचेतनसें अभेदही विषयकी अपरोक्षताहै॥ वृत्तिद्वारा बाह्यचेतनका प्रमातृचेतनसें अभेदहोवै तिससमें प्रमातृचेतनही घटादिकनका अधिष्ठान होवैहै औ दशमोस्ति। ब्रह्मास्ति। प्रमातासें अभेदबोधक शब्दके अभावतें श्रोताकूं स्वाभिन्न दशम ब्रह्मकाबी परोक्षज्ञानही होवैहै औजिसवाक्यमें प्रमातासें अभिन्नयोग्य विषयका प्रमातासें अभेदबोधकशब्दहोवै तिसवाक्य सें अपरोक्षज्ञानही होवैहै। यह मत सर्वज्ञात्ममुनिकाहै। या मतमें केवलशब्दही अपरोक्षज्ञानका हेतुहै॥ और परोक्षज्ञानके संस्कारविशिष्ट एकाग्रचित्तसहित शब्दसें अपरोक्षज्ञान होवैहै यहमत प्रथम कह्याहै॥ और स्वकहिये अपनीसत्तासें प्रकाश कहिये संशयादिराहित्यही स्वप्रकाशपदका अर्थ अद्वैत ग्रंथनमैं कह्याहै॥ और स्वव्यवहारके अनुकूलचैतन्यसें अ

ध्येयहोय

यत् कहियेजिसब्रह्मकूं मनकरिकै लोक नहीं जानतेहैं

भेद अपरोक्षविषयका लक्षण है अंतःकरण औ सु
खादिकसाक्षिचेतनमें अध्यस्त होनेते। धर्मसहित अं
तःकरण साक्षिचेतनसें अभेद है। औ साक्षिचेतनसें
तिनकाप्रकाश होनेते तिनकेव्यवहारके अनुकूल
साक्षिचेतनहै। यांते स्वकहिये अंतःकरण औसुख
दिकनके व्यवहारके अनुकूल जो साक्षिचेतन तासें
अभेदरूप अपरोक्षता का लक्षण सुखादि सहित।
अंतःकरणमें संभवैहै॥ अद्वैतविद्याचार्यकी रीतिसें
अपरोक्षत्वधर्म चेतनकाहै वृत्तिका नहीं। स्वव्यवहा
रानुकूलचेतनसें अनावृत्त विषयका अभेदतो अप
रोक्षविषयका लक्षणहै॥ औ अनावृत्तविषयसें स्व
व्यवहारानुकूलचेतनका अभेद अपरोक्षज्ञानका ल
क्षणहै॥ औ वृत्तिका प्रयोजन यह है जीवकूं अवस्था
त्रय का संबंध वृत्तिसें होवैहै औ पुरुषार्थप्राप्तिवी वृ
त्तिसें होवैहै यांते संसार प्राप्तिकी हेतु वृत्तिहै औ।
मोक्षप्राप्तिकी हेतु वृत्तिहै काहेतें अवस्था त्रयके सं
बंधसें जीवकूं संसारहै॥ अज्ञानके अंशका नाश अ
परोक्षवृत्तिका प्रयोजनहै औ असत्वापादक अज्ञा
नांशकानाश परोक्ष वृत्तिका प्रयोजनहै॥ और जीवचे
तनसें विषयका संबंध वृत्तिकाप्रयोजनहै यह दूस
रा पक्षहै। सो प्रकाशहेतु जीवका विषयतें संबंध अ
भिव्यंजक अभिव्यंग्य भावहै। विषयमें अभिव्यंजक
ताहै। जीवचेतनमें अभिव्यंग्यताहै। जाका प्रतिबिंब
होवै सो अभिव्यंग्यकहियेहैं। जामैं प्रतिबिंबहोवै ता
कूं अभिव्यंजक कहेहैं। घटादिक अभिव्यंजकहैं चे

तन अभिव्यंग्यहै। घटादिकनमें स्वभावसें प्रतिबिंब ग्रहणकी सामर्थ्य नहीं किंतु स्वाकारवृत्तिसंबंधसें चेतनप्रतिबिंबके ग्रहणयोग्य होवैहैं। इसरीतिसें प्रतिबिंबग्रहणरूप व्यंजकता घटादिक विषयमें है। जैसे दर्पणसंबंधबिना कुड्य में सूर्यका प्रतिबिंब होवैनहीं यांते विषयसंबंधार्थ वृत्तिहै तां संबंधसें विषयका प्रकाश होवैहै॥ जीवचेतनविभुहै या पक्षमें विलक्षणसंबंधकी जनक वृत्तिहै औ अंतःकरणविशिष्टचेतन जीवहै यापक्षमें तो इंद्रिय विषयके संबंधसें अंतःकरकीवृत्ति घटादिदेशमें जावैहै॥ जीवचेतनका घटादिकनतें संबंध होवैहै। या पक्षमें विषयसंबंधार्थ वृत्तिहै। कर्तृत्वादिक अभिमान अंतःकरणविशिष्टमें होवैहै। यांते अंतःकरणावच्छिन्नकूं जीव कहेहैं॥ औ वृत्तिसंबंधसें घटादिकनमें चेतनका प्रतिबिंबहोवे तांकूं फल चेतन कहेहैं औ कोई ऐसे कहेहैं घटावच्छिन्नचेतन ही अज्ञात होवै तब विषयचेतन कहियेहैं औ ज्ञातहोवै तब घटावच्छिन्नचेतनकूं ही फलचेतन कहेहैं ताहीकूं प्रमेयचेतन कहेहैं। परंतु विद्यारण्यस्वामीनें औ वार्तिककारनें प्रमाणवृत्तिसें उत्तरकालमें जो घटादिकनमें चेतनका आभासहोवै सोई फलचेतन कह्याहै॥ औ वेदांतवाक्यसें। अहंब्रह्मास्मि। ऐसी अंतःकरणकी वृत्ति होवै तासें प्रपंचसहित अज्ञानकी निवृत्ति होवैहै सोई मोक्षहै। यांते वृत्तिका संसारदशामें तो व्यवहारसिद्धि प्रयोजनहै औ परमप्रयोजन मोक्षहै॥ कल्पितकी

निवृत्ति अधिष्ठानरूप होवैहै। यांते संसार निवृत्ति मोक्षहै। या कहनेतैं ब्रह्मरूप मोक्षहै। यह सिद्ध होवैहै। औ अंतःकरण विशिष्ट प्रमाताहै। अंतःकरण उपहित जीवसाक्षीहै। अंतःकरण उपलक्षित ईश्वरसाक्षीहै॥ कार्यमैं संबंधी जो वर्तमान व्यावर्तक सो विशेषण कहियेहैं। जैसे नीलरूपवाला घट उपजैहै या स्थानमैं नीलरूप विशेषणहै काहेतैं उत्पत्तिरूप कार्यमैं संबंधीहै औ घटमैं वर्तमानहुआ पीतघटसैं व्यावर्तकहै॥ औ कार्यमैंअसंबंधी वर्तमान व्यावर्तक उपाधी कहियेहैं। जैसे भेरी उपहित आकाशमैं शब्द है इस स्थानमैं भेरीउपाधीहै काहेतैं शब्दकी अधिकरणतामैं भेरीका संबंधनहीं औ वर्तमानभेरी बाह्याकाशतैं व्यावर्तकहै॥ औ कार्यमैं असंबंधी व्यावर्तकहोवै सो उपलक्षण कहियेहैं। उपलक्षणमैं वर्तमानकी अपेक्षानहीं अतीतवी उपलक्षण होवैहै। उपाधीतो विशेष्यके सर्व देशमैं होवैहै। उपलक्षण एक देशमैं होवैहै। जैसे काकवत् गृहं गच्छ। ऐसाकहे जिसगृहमैं काकसंयोग देख्याहै काकचल्याजावै तोवी गमनकरैहै। ईहां गृहका काक उपलक्षण है। काहेतैं गमनरूप कार्यमैं असंबंधीहै। अन्य गृहतैं व्यावर्तक है॥ यांते यह निष्कर्ष हुआ व्यावर्तक व्यावर्तनीय इन दोनूंमैं विशिष्ट व्यवहार होवैहै॥ जितनेदेशमैं व्यावर्तकहोवै उतनेदेशमैं स्थित व्यावर्तनीयमात्रमैं उपहित व्यवहारहोवैहै। परंतु व्यावर्तक सद्भावकालमैं व्यावर्तककूं त्यागके उपहितव्यवहार होवैहै॥ औ व्या-

वर्तनीयके एकदेशमें कदाचित् व्यावर्तक होवै तहां। व्यावर्तनीयमात्रमें उपलक्षित व्यवहार होवैहै। ईहां व्यावर्तक सद्भावकी अपेक्षा नहीं॥ ईहां प्रसंग यहहै मोक्षदशामें ज्ञातत्वके अभावतें ज्ञातत्वविशिष्ट औ ज्ञातत्वउपहित तो अधिष्ठान संभवै नहीं तथापि ज्ञातत्वउपलक्षित अधिष्ठान मोक्षदशामें बीहै॥ अज्ञानसहितभावाभावरूप प्रपंच औ ताकीनिवृत्ति सकल अनिर्वचनीयहै। तिनसर्वका अधिष्ठानरूप बाध होयके निर्द्वैतस्वरूप परमानंदरूप परमपुरुषार्थ मोक्ष है इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य यतिवर्य्य॥ श्रीस्वामीरामगिरि शिष्येण काशीवासिना अनन्तानन्दगिरिणा विरचिते वृत्तिप्रभाकरसारसंग्रहे जीवेश्वरस्वरूपनिरूपणपूर्वक वृत्ति प्रयोजन निरूपणसहित कल्पितनिवृत्तिस्वरूप निरूपणं नाम अष्टमः प्रकाशः ॥ ८ ॥ संपूर्णम्॥ शुभम् भूयात्॥ श्रीकाशीविश्वनाथार्पणमस्तु॥ श्रीशंकरः प्रसन्नोऽस्तु॥ श्रीशिवोजयति

ग्रंथके आरंभमें। अहं ब्रह्मास्मि। यह कह्याहै। ग्रंथकी समाप्तिमें सर्वका अधिष्ठानरूपबाधहोयके निर्द्वैतस्वरूप परमानंदरूप परमपुरुषार्थमोक्षहै यहकह्याहै॥ तहां यह जिज्ञासा होवैहै। अधिष्ठानरूपब्रह्मकाक्यालक्षणहै। तिस अधिष्ठानरूपब्रह्मके जाननेवाला अधिकारिपुरुष। किससाधनकरिके मुक्तहोताहै। सोसाधन क्या क्याहैं। अधिकारिपुरुष जिनों गुरोंके पास जाइकर प्राप्त होवै तिनों गुरोंका क्यालक्षहै॥ दू-

सराप्रश्न यहहै ब्रह्ममयी वृत्ति मैं किसकिस प्रकार । स्थितभये हैं ॥ और ब्रह्ममयी वृत्ति मैं सर्वदाकाल स्थित होते भये हैं । अथवा किसे किसे काल मैं स्थित होते भये हैं ॥ ऐसी शंकाकेहुये । तिसका समाधान पूर्णमद इत्यादि वाक्यनतें कहेहैं । विस्तार के भयेसें मूल हीं लिखाहै ॥

ॐ

ॐ स्वस्ति श्रीगणेशायनमः ॥

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमदुच्यते ॥ पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥ १ ॥ ॐ ईशावास्यमिदꣳ सर्व्वं यत्किंच जगत्यां जगत् ॥ तेनत्यक्तेन भुञ्जीथा मागृधः कस्यस्विद्धनम् ॥ २ ॥ परीक्ष्य लोकान्कर्म्मचितान् ब्राह्मणो निर्वेदमायान्नास्त्यकृतः कृतेन ॥ तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठं ॥ ३ ॥ तस्मै स विद्वानुपसन्नाय सम्यक्प्रशांतचित्ताय शमान्विताय ॥ येनाक्षरं पुरुषं वेद सत्यं । प्रोवाच तां तत्त्वतो ब्रह्मविद्याम् ॥ ४ ॥ ब्रह्मादिस्थावरांतेषु वैराग्यं विषयेष्वनु ॥ यथैव काकविष्ठायां वैराग्यं तद्धि निर्मलम् ॥ ५ ॥ यतो यतो निवर्तते ततस्ततो विमुच्यते ॥ निवर्तनाद्धि सर्वतो नवेत्ति दुःखमण्वपि ॥ ६ ॥ नित्यमात्मस्वरूपं हि दृश्यं तद्विपरीतगं ॥ एवं यो निश्चयः सम्यग्विवेको वस्तुनः सवै ॥ ७ ॥ सदैव वासनात्यागः शमोयमिति शब्दितः ॥ निग्रहो बाह्यवृत्तीनां दम इत्यभिधीयते ॥ ८ ॥ विषयेभ्यः परावृत्तिः परमो पर्रति

हिंसा॥ सहनं सर्वदुःखानां तितिक्षा सा शुभा मता॥ ९॥ निगमाचार्यवाक्येषु भक्तिः श्रद्धेति विश्रुता॥ चित्तैकाग्र्यं तु सल्लक्ष्ये समाधानमिति स्मृतम्॥ १०॥ संसारबंधनिर्मुक्तिः कथं मे स्यात्कदा विधे॥ इति या सुदृढा बुद्धिर्वक्तव्या सा मुमुक्षुता॥ ११॥ उक्तसाधनयुक्तेन विचारः पुरुषेण हि॥ कर्त्तव्यो ज्ञानसिद्ध्यर्थमात्मनः शुभमिच्छता॥ १२॥ नोत्पद्यते बिना ज्ञानं विचारेणान्यसाधनैः॥ यथा पदार्थभानं हि प्रकाशेन बिना क्वचित्॥ १३॥ कोऽहं कथमिदं जातं को वै कर्त्ताऽस्य विद्यते॥ उपादानं किमस्तीह विचारः सोऽयमीदृशः॥ १४॥ योऽन्यथा सन्तमात्मानमन्यथा प्रतिपद्यते॥ किं तेन न कृतं पापं चोरेणात्मापहारिणा॥ १५॥ आत्मानं चेद्विजानीयादयमस्मीति पूरुषः॥ किमिच्छन् कस्य कामाय शरीरमनुसंज्वरेत्॥ १६॥ उत्सेक उदधेर्यद्वत् कुशाग्रेणैकबिन्दुना॥ मनसो निग्रहस्तद्वद्भवेदपरिखेदतः॥ १७॥ मनोदृश्यमिदं द्वैतं यत् किञ्चित् सचराचरम्॥ मनसो ह्यमनीभावे द्वैतं नैवोपलभ्यते॥ १८॥ अन्यथा गृह्णतः स्वप्नो निद्रा तत्त्वमजानतः॥ विपर्य्यासे लयोः क्षीणे तुरीयं पदमश्नुते॥ १९॥ आदावन्ते च यन्नास्ति वर्त्तमानेऽपि तत्तथा॥ वितथैः सदृशाः सन्तोऽवितथा इव लक्षिताः॥ २०॥ यथा स्वप्नमयो जीवो जायते म्रियतेऽपि च॥ तथा जीवा अमी सर्वे भवन्ति न भवन्ति च॥ २१॥ अद्वितीयब्रह्मतत्त्वे स्वप्नोऽयमखिलं जगत्॥ ईशजीवादिरूपेण चेतनाचेतनात्मकम्॥ २२॥ आत्मा विनिष्कलो ह्येको देहो बहुभिरावृतः॥ तयोरैक्यं प्रपश्यन्ति किमज्ञानमतः परम्॥ २३॥ आत्मानि

यामकश्चांतं दैहोबाह्यो नियम्यकः॥ तयोरैक्यंप्रपश्यंति किमज्ञानमतः परम्॥ २४॥ ब्रह्मैवाहंसमःशान्तः सच्चिदानंदलक्षणः॥ नाहंदेहोह्यसद्रूपो ज्ञानमित्युच्यतेबुधैः॥ २५॥ निर्विकारो निराकारो निरवद्योहमव्ययः॥ नाहंदेहोह्यसद्रूपो ज्ञानमित्युच्यतेबुधैः॥ २६॥ निरामयो निराभासो निर्विकल्पोहमाततः॥ नाहंदेहोह्यसद्रूपो ज्ञानमित्युच्यतेबुधैः॥ २७॥ उपादानंप्रपंचस्य ब्रह्मणोन्यन्नविद्यते॥ तस्मात्सर्वप्रपंचोयंब्रह्मैवास्तिनचेतरत्॥ २८॥ भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्व्वसंशयाः॥ क्षीयन्ते चास्यकर्म्माणि तस्मिन्दृष्टेपरावरे॥ २९॥ सोऽकामो निष्काम आप्तकाम आत्मकामो॥ नतस्यप्राणाउत्क्रामंत्यत्रैवसमविलीयंते॥ ३०॥ यदासर्व्वेप्रमुच्यंते कामायेऽस्यहृदिश्रिताः॥ अथमर्त्योऽमृतोभवत्यत्र ब्रह्मसमश्नुते॥ ३१॥ नायमात्माबलहीनेनलभ्योनचप्रमादात्तपसोवाप्यलिंगात्॥ एतैरुपायैर्यततेयस्तुविद्वांस्तस्यैष आत्माविशतेब्रह्मधाम॥ ३२॥ ब्रह्मैवसन्ब्रह्माप्येति॥ ३३॥ इत्यंवाक्यैस्तदार्थानुसंधानंश्रवणंभवेत्॥ युक्त्यासंभावितत्वानुसंधानंमननंतुतत्॥ ३४॥ ताभ्यांनिर्विचिकित्सेर्थे चेतसःस्थापितस्ययत्॥ एकतानत्वमेतद्धि निदिध्यासनमुच्यते॥ ३५॥ आसुप्तेरामृतेःकालंनयेद्वेदांतचिंतया॥ दद्यान्नावसरंकिंचित्कामादीनांमनागपि॥ ३६॥ ध्यातृध्यानेपरित्यज्यक्रमाद्ध्येयैकगोचरम्॥ निवातदीपवच्चित्तं समाधिरभिधीयते॥ ३७॥ यदापञ्चावतिष्ठन्तेज्ञानानिमनसासह॥ बुद्धिश्चनविचेष्ट

अहं निरामयः सर्वरोगरहितः॥ निराभासोऽविद्याकल्पितफलत्वाभ्रमः॥ आततः व्यापकः

निरवयो अवयवादिरहितः॥ इस लोक की कामना से रहित॥ परलोक की कामना से रहित॥ पूर्णकाम॥ आत्मा की कामना

तें तामाहुः परमाङ्गतिम् ॥ ३८ ॥ क्षणमेकं क्रतूं शतस्यापि ॥ ३९ ॥ क्षणं ब्रह्माहमस्मीति यः कुर्यादात्मचिन्तनम् ॥
समहापातकं हन्यात्तमः सूर्योदयो यथा ॥ ४० ॥ दृष्टिं ज्ञानमयीं कृत्वा पश्येद्ब्रह्ममयं जगत् ॥ सा दृष्टिः परमोदारा नेनासाग्रावलोकिनी ॥ ४१ ॥ दृष्टिदर्शनदृश्यानां विरामो यत्र वा भवेत् ॥ दृष्टिस्तत्रैव कर्त्तव्या ननासाग्रावलोकिनी ॥ ४२ ॥ चित्तादिसर्वभावेषु ब्रह्मत्वेनैव भावनात् ॥ निरोधः सर्ववृत्तीनां प्राणायामः स उच्यते ॥ ४३ ॥ निषेधनं प्रपंचस्य रेचकाख्यः समीरणः ॥ ब्रह्मैवास्मीति या वृत्तिः पूरको वायुरीरितः ॥ ४४ ॥ ततस्तद्वृत्तिनैश्चल्यं कुंभकः प्राणसंयमः ॥ अयं चापि प्रबुधानामज्ञानां घ्राणपीडनं ॥ ४५ ॥ ब्रह्मैवास्मीति सद्वृत्त्या निरालंबतया स्थितिः ॥ ध्यानशब्देन विख्याता परमानन्ददायिनी ॥ ४६ ॥ सत्यं सत्यं पुनः सत्यं भुजमुत्थाप्य मुच्यते ॥ अहं ब्रह्मास्मि यो वेद पुनर्जन्म न विद्यते ॥ ४७ ॥ ये हि वृत्तिं जहत्येनां ब्रह्माख्यां पावनीं परां ॥ ते तु वृथैव जीवंति पशुभिश्च समा नराः ॥ ४८ ॥ ये हि वृत्तिं विजानंति ज्ञात्वापि वर्द्धयंति ये ॥ ते वै सत्पुरुषा धन्या वंद्यास्ते भुवनत्रये ॥ ४९ ॥ येषां वृत्तिः समारूढ़ः परिपक्वा च सा पुनः ॥ ते वै सद्ब्रह्मतां प्राप्ता नेतरे शब्दवादिनः ॥ ५० ॥ कुशला ब्रह्मवार्त्तायां वृत्तिहीनाः सुरागिणः ॥ तेप्यज्ञानितया नूनं पुनरायांति यांति च ॥ ५१ ॥ निमेषार्द्धं न तिष्ठंति वृत्तिं ब्रह्ममयीं विना ॥ यथा तिष्ठंति ब्रह्माद्याः सनकाद्याः शुकादयः ॥ ५२ ॥ तत्त्वमध्यात्मिकं दृष्ट्वा तत्त्वं दृष्ट्वा तु बाह्यतः ॥ तत्त्वीभूतस्तदारामस्तत्त्वात्प्रच्युतो भवेत

दृष्टिपंजः करपादवृत्तिः ॥ ब्रह्मैवसर्वं ॥

॥५३॥ तच्चिंतनं तत्कथनमन्योऽन्यं तत्प्रबोधनम्॥ एतदेकपरत्वं च ब्रह्माभ्यासं विदुर्बुधाः॥५४॥ परोक्षं ब्रह्मविज्ञानं शाब्दं देशिकपूर्वकम्॥ बुद्धिपूर्वकृतं पापं कृत्स्नं दहति वन्हिवत्॥५५॥ अपरोक्षात्मविज्ञानं शाब्दं देशिकपूर्वकम्॥ संसारकारणाज्ञानतमसश्चण्डभास्करः॥५६॥ धन्योऽहं धन्योऽहं नित्यं स्वात्मानमञ्जसा वेद्मि॥ धन्योऽहं धन्योऽहं ब्रह्मानन्दो विभाति मे स्पष्टम्॥५७॥ न निरोधो न चोत्पत्तिर्न बद्धो न च साधकः॥ न मुमुक्षुर्नवैमुक्त इत्येषा परमार्थता॥५८॥ न कश्चिज्जायते जीवः सम्भवोऽस्य न विद्यते॥ एतत्तदुत्तमं सत्यं यत्र किञ्चिन्न जायते॥५९॥ यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ॥ तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः॥६०॥ दुर्दर्शमतिगंभीरमजं साम्यं विशारदम्॥ बुद्ध्वा पदमनानात्वं नमस्कुर्मो यथा बलम्॥६१॥ इति॥ शिव॥ शिव॥ शिव॥ ॥

॥ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः॥

ॐ तत्सच्छान्तिः॥ शान्तिः॥ शान्तिः॥

ॐ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	३	सें	सें	३२	१७	जम्य	जन्य
१	९	तिंहिं	तिँहिँ	३३	७	मे	में
१	११	प्रीप्ती	प्राप्ति	३३	१०	मैं है	मैं हैं
२	१७	साधार	साधारण				
२	२०	हित	रहित	३३	२०	व्यापारवता	व्यापारवत्ता
२	२१	उपआवे	उपजावै	३४	१७	वासिनी	वासिना
२	२४	नहां	नहीं	३७	१३	नूप्	रूप
३	२५	वायू	वायु	४०	१	महीं	नहीं
४	३	वायू	वायु	४०	२४	संसगा	संसर्गा
१५	३	पुरूष	पुरुष				
२१	१६	बोध्य	बोध्य	४२	९	तांका	तांका
२६	१७	होबे	होवे	४४	१९	होबे	होवै
२७	२१	वन्हिमाम्	वन्हिमान्	४५	१३	निश्चष	निश्चय
२९	७	वेदवि	वेदवी	४९	५	नानेवा	नानेव
३०	२५	उष्ट्र	उष्ट्र	४९	५	इसरीती	इसरीति
३१	२५	गुरू	गुरु	५३	१०	संभव	संभवै
३२	३	है	हैं	५५	१५	पसही	पसही
३२	२०	भात्र	भाव	५९	९	तामे	तामें
७७	८	बर्तमान	वर्तमान	७८	२५	कालसहै	कालसणहै

॥ॐ॥ इतिशुद्धिपत्रम्समाप्तम्

तावद्गर्जंति शास्त्राणि जंबुका विपने यथा ॥
न गर्जंति महाशक्ति यावद्वेदांत केसरि॥ १॥

डा० क्लार्कके नाम

नीचे लिखे आशयका तार डा० जी० बी० क्लार्क, लण्डनको भेजा गया है।

ब्रिटिश कमिटीने कांग्रेस डेप्युटे-... जो सहायता की है कांग्रेस उसकी बड़ी प्रशंसा करती ... क्लार्क और डा० ... और पारख- ... के पुन- ...

गवर्नरके नाम

लखनऊ १५ जनवरी। निम्नलि-खित तार बम्बईके गवर्नरके प्राइवेट सेक्रेटरीके पास भेजा गया :—

कृपया निम्नलिखित ... गवर्नर महोदयके सा... अमृतसरकी कांग्रेस... श्रीमान्की सरकार... उस पुलिस पकर ५... बम्बई प्रदेशमें 'क्षति... हुआ है कारण यह... वश्यक और अन्याय...

(ह०) ...

हड़ताल...

मथुराकी चि...

... की रिपो...

मरनेकी खबर है। पर उस किलेसे उनको बहुत हानि सहनी पड़ी है। बहुतसे लोग मारे गये हैं। इस हानि-का सन्धिकी बातचीत करनेवालोंपर बड़ा प्रभाव पड़ेगा। जो महाशय सन्धिके विरुद्ध हैं उनकी संख्या ४००के लगभग है। वे शिलमर्शाई और सू... नाले पर हट गये हैं और वहां उनके साथ कुछ थाना वजीरी मिले हैं। अब इनकी संख्या ६०० हो गयी है। सोहर और थालके पीछे चाहीखेल पर एक धावा हुआ था और दूसरा डोयमपर। इनका पूरा विवरण नहीं मिला है।

... अमेरिका संघके शामिल ... यूरोपके नये राष्ट्रोंको ... चेष्टा होगी। प्रो० ... कथनका वायसने विरोध ... नेटर हिचकाकने दोनोंमें ... चेष्टा की। वर्लिनमें ... कोके मृ० दूत डि० ... तको सन्देसा भेजा

किया है उसका समर्थन करो। बोर्डका प्रस्ताव कमिटीके पास भेज दिया गया और ११ जुलाईकी बैठकमें इसपर विचार हुआ। इस बीचमें जनरल सेक्रेटरीने ब्रिटिश कमिटीके अध्यक्षके पास पत्र भेजा कि यद्यपि बोर्डमें वैसा प्रस्ताव पास हो गया है तो भी अबतक पत्रमें कांग्रेसकी नीतिका समर्थन नहीं हो रहा है और अभीको कठिनाइयोंको दूर करनेके विचारसे डेप्युटेशन पत्रका ... अपने ऊपर लेने और ... सहायता आदि ... है। इस पत्रपर ... बोर्ड का ...

जाय और उसमें निम्न-
...वस्थाएं हों—(१) ब्रिटिश-
और अविभाज्य हैं और
तथा ब्रिटिश साम्राज्यान्त-
...जो तथा जितने अधिकार
उतनेही ब्रिटिश भारत-
...हैं (२) श्रीमान सम्राटकी
...भारतमें रहनेवाली या जो
प्रजा कानूनके समा-
...। दण्डविधान अथवा
...कोई भी विभिन्न प्रकार
(३) अदालतोंमें कानूनके
...होनेपर ही ब्रिटिश-
...भी प्रजाके जीवन,
...पत्ति, माल ———

नाम इस आशयका तार भेजा गया है।

"गत ७ तारीखको जो तार मैंने आपके पास भेजा था उसीके साथ साथ यह तार भी आप कृपाकर वायसरायके सम्मुख उपस्थित कर दें।

दूध देनेवाली गायों और बच्चे उत्पन्न करनेकी शक्ति रखनेवाले सांड़ोंके विदेश भेजे जानेकी बातको अमृतसरकी कांग्रेस देशकी आर्थिक अवस्थाको और भी बुरी करनेवाली समझती और चाहती है कि सरकार इस रफ्तनीको बहुत शीघ्र बन्द कर दे।

—मोतीलाल नेहरू
अध्यक्ष कांग्रेस।

...वर्षके दिल्ली वाले अधिवेशनमें ...

लाहौर

खबर है कि हड़तालियोंके प्रतिनिधि १३ तारीखको लाहौरमें एजेंटसे मिले थे। उनकी प्रधान बात यह थी कि हमारा वेतन पचास सैकड़ा बढ़ाया जाय। कोई चार घंटेतक कानफरेन्स हुई। कुछ समझौता हो गया।

भटिंडेमें हड़ताल।

भटिंडेके रेलवे कर्मचारियोंने सहारनपुरका साथ दिया और १३ ता० को हड़ताल कर दी। अधिकारियोंने उनसे कहा है कि जबतक तुम लोग कामपर नहीं लौटोगे तब तक तुम्हारी बातपर ध्यान नहीं दिया जा सकता।

बम्बई।

बम्बईकी मिलोंकी हड़तालके सम्बन्धमें कोई नयी [illegible] बात नहीं है। हड़तालियों प्रकट [illegible] संक्रान्ति शान्तिसे ... ऐसी आशा की जाती है कि ... समझौता हो जायगा और लोग ... [illegible]।

...हिन्दू विवा[illegible] ...पी० ओ और ...

...तीसरे दिन बाबू कन्हैयालालजी लाहौरे बी० ए०एलएल० बी० का व्याख्यान हुआ था। आपने ... चतुर्वेद समाजकी कुरी[illegible] ... शन करना चाहा था (अ[illegible] शिशुविवाहादि) परन्तु इसपर और लोग मजकूर और क्रुद्ध हुए और व्याख्याता महाशयको उन्होंने हाथ पकड़कर बैठा दिया तथा कटु शब्द भी व्यवहृत हुए। उचित तो यह था कि यदि वह अनुचित व्याख्यान दे रहे थे तो लिखित सूचनासे व्याख्यान रोकनेकी सूचना दी जाती। व्याख्याता पढ़े लिखे और सभाके नियमसे भलीभांति परिचित थे, वे सूचना पातेही व्याख्यान बन्द कर देते। परन्तु ऐसा न कर उनसे जो बर्त्ताव किया गया वह सर्वथा अनुचित था।

व्यापारिक मण्डल।

मथुराके व्यवसायियों द्वारा एक व्यापारिक मण्डल स्थापित हुआ है। उद्देश्य व्यापारका संरक्षण करना है। ऐसी संस्थाओंकी बहुत ही आवश्यकता है, यदि वे अपने उद्दे...

...नहीं ह... कुशल... विलस... किया... मेल क... रहनेवा... डोराड़... है।

...समाचा... वालें दि... कांसके... आहको... पालके... कहा जा... जायगे

...स तारा बा...
...जगत प्रसिद्ध
सर्कस खेल